ऋग्वेद

ओ३म्

यजुर्वेद

पवमान

(संयुक्तांक)

मूल्यः ₹ 20

वर्ष : 32 आश्विन-कार्तिक वि0स0 2077 अंक : 9-10 सितम्बर-अक्टूबर 2020

मुद्रकः सरस्वती प्रेस, देहरादून वजनः 50 ग्राम

मर्यादा पुरुषोत्तम राम अंक

प्रस्तावित मर्यादा पुरुषोत्तम राम के भव्य स्मारक एवं मन्दिर का दृश्य

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

विनम्र अनुरोध

प्रेम प्रकाश शर्मा
सचिव
9412051586

प्रबुद्ध पाठकगण,

आप विदित हैं कि कोराना माहमारी के कारण वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून की समस्त गतिविधियां पिछले कई महीनों से प्राय: रुकी हुई हैं। हमने अप्रैल से दिसम्बर, 2020 माह तक के जिन कार्यक्रमों के लिए विद्वानों से समय ले लिया था वह सभी कार्यक्रम कोरोना के कारण निरस्त करने पड़े हैं। अनेक भाई बहनों के द्वारा आश्रम में प्रवास के लिए निवेदन आ रहे हैं लेकिन देहरादून शहर में कोराना के बढ़ते प्रभाव के कारण हम आप लोगों की सेवा करने में अभी असमर्थ हैं।

पवमान पत्रिका का प्रकाशन भी माहमारी के कारण अस्त-व्यस्त हो गया है। अब पुन: प्रयास किया जा रहा है कि जब तक परिस्थितयां पूर्ण रूप से ठीक नहीं हो जाती और आश्रम की आर्थिक स्थिति में समुचित सुधार नहीं हो जाता, तब तक कम से कम द्विमासिक पवमान पत्रिका आपकी सेवा में भेजते रहेंगे। इसी अंक में हम उन पाठकों की सूची भी प्रकाशित कर रहे हैं जिनपर पत्रिका का शुल्क देय हो गया है। सूचनीय है कि पत्रिका के प्रकाशन पर प्रति माह लगभग 20,000 रुपए व्यय होता है जो वार्षिक पाठकों के शुल्क से पूरा नहीं हो पाता। इसके लिए हमें विज्ञापनों की आवश्यकता है जिसके रेट प्रथम पृष्ठ पर दिये गये हैं। आशा है आप इस कार्य में हमारी मदद करना चाहेंगे। यह भी अवगत कराना है कि जिन पाठकों को पोस्टल डिपार्टमेंट की अव्यवस्था के कारण पवमान पत्रिका नहीं मिल पाती उनके द्वारा कार्यालय में सूचित करने पर पत्रिका पुन: भेज दी जाती है।

कोरोना माहमारी का प्रकोप कम होने पर हम शीघ्र ही कोई न कोई कार्यक्रम अवश्य रखेंगे जिससे आप परिवार सहित आश्रम में आकर यहां के शुद्ध वातावरण एवं सुखद जलवायु का आनन्द ले सकें। सभी पाठकों को विजयदशमी पर्व की हार्दिक शुभकामनायें।

ओ३म्

पवमान

वर्ष–32 अंक–9–10 (संयुक्तांक)
आश्विन–कार्तिक 2077 विक्रमी सितम्बर–अक्टूबर 2020
सृष्टि संवत् 1,96,08,53,120 दयानन्दाब्द : 196

★

–: संरक्षक :–
स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती
मो. : 9410102568

★

–: अध्यक्ष :–
श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री
मो. : 09810033799

★

–: सचिव :–
प्रेम प्रकाश शर्मा
मो. : 9412051586

★

–: आद्य सम्पादक :–
स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

–: मुख्य सम्पादक :–
डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
अवैतनिक
मो. : 9336225967

★

–: सम्पादक मण्डल :–
अवैतनिक
आचार्य आशीष दर्शनाचार्य
मनमोहन कुमार आर्य–
मो. : 9412985121

★

–: कार्यालय :–
वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,
तपोवन मार्ग, देहरादून–248008
दूरभाष : 0135–2787001
मोबाईल : 7895978734 (श्री चन्दन सिंह)
Email : vaidicsadanashram88@gmail.com
Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	आचार्य डॉ० रामनाथ वेदालंकार	3
वेदाधारित वाल्मीकि रामायण के नैतिक मूल्यों से आदर्श समाज का निर्माण	डॉ0 कृष्ण कान्त वैदिक	4
मर्यादा पुरुषोत्तम राम का आदर्श, प्रेरक एवं अनुकरणीय जीवन	मनमोहन कुमार आर्य	7
आर्यसमाज एक अद्वितीय धार्मिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय संगठन है	मनमोहन कुमार आर्य	10
वेदोक्त 'आत्मदाः' शब्द पर विचार	डॉ. जयदत्त उप्रेती	13
मृतक श्राद्ध का विचार वैदिक सिद्धान्त पुनर्जन्म के विरुद्ध है	मनमोहन कुमार आर्य	15
ऋषि दयानन्द द्वारा हिन्दी अपनाने से इसका देश देशान्तर में प्रचार हुआ	मनमोहन कुमार आर्य	17
हनुमान जी की नीतिमत्ता	ईश्वरी प्रसाद प्रेम	21
वेदों में स्वस्थ–जीवन के मौलिक सूत्र	डॉ0 भवानीलाल भारतीय	24
श्रद्धांजलि		26

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. "वैदिक साधन आश्रम"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. "पवमान"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
सत्संग भवन एवं आरोग्य धाम के निर्माण में सहयोग हेतु			
3. "वैदिक साधन आश्रम"	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स 17 राजपुर रोड, देहरादून	00022010029560	ORBC0100002
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
4. 'तपोवन विद्या निकेतन"	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1.	कलर्ड फुल पेज	रु. 5000/– प्रति माह
2.	ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज	रु. 2000/– प्रति माह
3.	ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज	रु. 1000/– प्रति माह

सदस्यों के लिए पवमान पत्रिका के रेट्स

1.	वार्षिक मूल्य	रु. 200/– वार्षिक
2.	15 वर्ष (आजीवन) के लिए मूल्य	रु. 2000/–

नोटः पवमान पत्रिका फुटकर विक्रय के लिए उपलब्ध नहीं है।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

आप्त पुरुष हैं मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

श्रीराम का जीवन कुछ इस तरह भारत के जन–जन के हृदय पटल पर अंकित है कि उसे काल की कोई अवधि मिटा नहीं सकती है। वे 'मर्यादा पुरुषोत्तम' भी कहलाते हैं। उन्होंने मानव मात्र के लिए मर्यादा पालन का जो आदर्श प्रस्तुत किया वह संसार में अन्यत्र नहीं मिल सकता है। राम ने अपना पहला आदर्श आज्ञाकारी पुत्र के रूप में प्रस्तुत किया। रानी कैकेयी ने पुराने वचन के फलस्वरूप ठीक उस समय जब राम का राज्याभिषेक होने वाला था, राम को वनवास और अपने पुत्र भरत के लिए राजतिलक की मांग कर दी। दशरथ नहीं चाहते थे परंतु अपने पिता के वचन का पालन करने के लिए राम ने उसी पल राजपाट को त्याग दिया और वनवासी बनकर वनों की ओर चले गए। पूरे चौदह वर्ष उन्होंने वन में बिताए। ऐसा आदर्श कौन प्रस्तुत कर सकता है। दूसरा आदर्श उन्होंने एक आदर्श भाई का प्रस्तुत किया। यद्यपि भरत की माता कैकेयी ने उन्हें राजपाट के बदले वनवास दिलाया था परन्तु श्रीराम ने भरत से ईर्ष्या और द्वेष न रखते हुए भरत के प्रति सदैव प्रेम की भावना रखी। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के भातृ–प्रेम के आदर्श को अपनाकर हम उनसे प्रेरणा ले सकते हैं। तीसरा आदर्श उन्होंने आदर्श पति का प्रस्तुत किया। वह चौदह वर्ष वनों में वनवासी होकर रहे और वनों में रहने वाले ऋषियों–मुनियों की सेवा का व्रत लिया। जो राक्षस ऋषियों के यज्ञ में विघ्न डालते थे उन राक्षसों का संहार किया। रावण ने जब उनकी धर्मपत्नी सीता का अपहरण करने का दुःस्साहस किया तो श्रीराम ने इस दुष्कृत्य के लिए रावण का सर्वनाश कर दिया। सबसे बड़ी बात यह है कि वह एक आदर्श राजा थे। श्रीराम ने राजा का जो आदर्श प्रस्तुत किया उसे आज तक कोई भुला नहीं सकता है और लोग राम राज्य की अभिलाषा रखते हैं। यही कारण है कि भगवान राम हिंदू संस्कृति और सभ्यता के एक अभिन्न अंग बन गए हैं। हिन्दू समाज राम को एक भगवान् के रूप में देखते हुए उनकी पूजा करते हैं। हम आर्यों के लिए राम एक आप्त पुरुष हैं।

''आप्लृ व्याप्तौ'' धातु से 'आप्त' शब्द सिद्ध होता है। 'यः सर्वान् धर्मात्मन आप्नोति वा सर्वेधर्मात्मभिराप्यते छलादिरहितः स आप्तः अर्थात् जो सत्योपदेशक सकलविद्यायुक्त सब धर्मात्माओं को प्राप्त होता और धर्म आत्मा से प्राप्त होने योग्य छल–कपटादि से रहित है, उसे आप्त कहते हैं। महर्षि दयानन्द यजुर्वेद के भाष्य (यजु0 34.42) में कहते हैं कि जो जगदीश्वर सबके सुख के लिये वेद के प्रकाश की और आप्त पुरुष पढ़ाने की इच्छा करता है तथा जो सबके लिये श्रेष्ठ बुद्धि, उत्तम कर्म और शिक्षा को देते हैं, उन सब श्रेष्ठ मार्गों के स्वामियों का सदा सत्कार करना चाहिये। इसी दृष्टिकोण को अपनाते हुए हम श्रीराम के लिए अपनी पूर्ण श्रद्धा रखते हैं। सदियों के संघर्ष के बाद अयोध्या में राम मन्दिर का निर्माण कार्य प्रारम्भ हो गया है। इसे हम इस आप्त पुरुष के एक स्मारक के रूप में देखते हैं जो समस्त भारत वासियों की श्रद्धा का एक प्रतीक है। इस अवसर पर हम अपनी शुभकामनाएँ प्रकट करते हुए यह ''**मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम विशेषांक**'' सुधी पाठको की सेवामें समर्पित करते हैं।

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

ओ३म्

वेदामृत

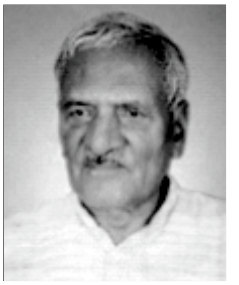

रक्षा करो, रक्षा करो

पाहि नो अग्ने रक्षसः, पाहि धूर्तेरराव्णः।
पाहि रीषत उत वा जिघांसतो, बृहद्भानो यविष्ठ्य।।

ऋग्वेद 1.36.15

ऋषिः कण्वः घौरः। देवता अग्निः। छन्दः विराड् बृहती।

(बृहद्भानो) हे महान् तेजवाले, (यविष्ठ्य) तरुणतम (अग्ने) अग्रणी परमात्मन्! (रक्षसः) राक्षस से (नः) हमारी (पाहि) रक्षा कर, (धूर्तेः) हानिकारक (अराव्णः) अदानशील कृपण से (पाहि) रक्षा कर, (रीषतः) हिंसक से (उत वा) और (जिघांसतः) वधेच्छु से (पाहि) रक्षा कर।

समाज में जब राक्षसों का उपद्रव बढ़ जाता है, तब सज्जनों का जीवन और उनके द्वारा किये जाने वाले धर्म–कर्म संकट में पड़ जाते हैं। वे दुष्ट, दस्यु, पापात्मा लोग राक्षस कहाते हैं, जिनसे सबको अपनी रक्षा करने की चिन्ता हो जाती है, या जो एकान्त पाकर अपना घात लगाते हैं। चोर, डाकू, लुटेरे, गिरहकट, तस्कर–व्यापारी आदि इसी श्रेणी के लोग होते हैं। समाज में कुछ व्यक्ति 'अरावा' अर्थात् अदानशील और कृपण प्रवृत्ति के होते हैं। ये लोग धन को अपने पास बटोरकर रख लेते हैं, जिससे समाज में आर्थिक विषमता उत्पन्न हो जाती है। आर्थिक विषमता को दूर करने का वैदिक उपाय दानशीलता ही है। पर जब कृपण (अरावा) लोगों की संख्या बढ़ने लगती है, तब ये लोग देश और समाज के लिए बड़े हानिकर और अभिशाप–रूप सिद्ध होते हैं। तीसरे, कुछ लोग हिंसा की प्रवृत्ति वाले होते हैं, जो हत्या–रूप महापाप करने में आनन्द लेते हैं। ये धनादि के लोभ में शिशुओं, तरुणों, युवतियों का वध कर देते हैं और एक हत्या करके दूसरी हत्या की योजना तैयार करते रहते हैं। ये सब लोग समाज के वातावरण को दूषित करने वाले हैं। राजशास्त्रकारों ने इनके लिए राजदण्ड का विधान किया है।

हे अग्ने! हे अग्रणी परमात्मन्! तुम 'बृहद्भानु' हो, अग्नि–ज्वालाओं से भी अधिक तुम्हारा महातेज है। तुम 'यविष्ठ्य' हो, अतिशय तरुण एवं बलवत्तम हो। अतः तुम उपर्युक्त सब अवांछित लोगों से हमारी रक्षा करने में समर्थ हो। पर हम यह नहीं चाहते कि हम हाथ–पर–हाथ धरे बैठे रहें और तुम आकर हमारी रक्षा कर जाओ। जब हम तुमसे यह प्रार्थना करते हैं कि तुम 'राक्षस' से, 'अरावा' से, हिंसक से और हिंसा का मन्सूबा बांधने वाले से हमारी रक्षा करो, तब हमारा यही आशय है कि तुम हमें भी अपने जैसा तेजस्वी और नित्य–तरुण बना दो, जिससे हम दुर्जनों से अपनी और अपने समाज की रक्षा कर सकें। हमें तुम इनका प्रतिरोध करने की, इन्हें पराजित करने की और इनका समूल उन्मूलन करने की शक्ति दो। और इससे भी बड़ी वह दिव्यशक्ति दो कि हम इनकी राक्षसी वृत्ति को, कृपणता को और हिंसा–प्रवृत्ति को नष्ट कर इन्हें भी अपने जैसा धर्मात्मा बना लें, जिससे दुष्टता का नग्न ताण्डव हमारे समाज से सदा के लिए मिट जाए और हम पवित्रता के वातावरण में श्वास ले सकें।

आचार्य डा. रामनाथ वेदालंकार
(रचित वेद–मंजरी ग्रन्थ से साभार)

वेदाधारित वाल्मीकि रामायण के नैतिक मूल्यों से आदर्श समाज का निर्माण

—डॉ0 कृष्ण कान्त वैदिक

भारत में वेद, उपनिषद्, दर्शन, गृहसूत्र आदि अनेक शास्त्रों में नीति के तत्त्वों का वर्णन किया गया है। एक प्रसिद्ध ग्रन्थ मनुस्मृति में कहा गया है—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।

अर्थात् इसी ब्रह्मवर्त देश में उत्पन्न हुए विद्वानों के सानिध्य से पृथ्वी पर रहने वाले सब मनुष्य अपने—अपने आचरण अर्थात् कर्तव्यों की शिक्षा ग्रहण करें।

मनुस्मृति में धर्म के धृति, क्षमा आदि दस लक्षण बताए गए हैं। यदि मनुष्य इन पर आचरण करते हुए जीवन बिताये तो सारे विश्व में शान्तिमय वातावरण पैदा कर समस्त मानव जाति को सुखी बनाया जा सकता है।

'नीति' शब्द की व्युत्पत्ति 'नी' धातु से हुई है। जिसका शाब्दिक अर्थ है— ले जाना। नीति का अर्थ है मनुष्य के जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के साधन—रूप नियम, जिन पर चल कर इस जीवन और परलोक (पुनर्जन्म) में कल्याण की प्राप्ति हो। आचार शिक्षा का सम्बन्ध व्यक्तिगत जीवन से है, जिसमें आत्मोन्नति पर बल दिया गया है। नैतिक शिक्षा में व्यक्ति के आचार—विचार की शुद्धि के साथ ही पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, वैश्विक और प्राणि मात्र से सम्बन्धित विषयों पर विचार किया जाता है। मनुष्य अपने—पराये, सजातीय—विजातीय, शत्रु—मित्र, परिचित—अपरिचित, आदि से किस प्रकार का व्यवहार करे, यह नैतिक शिक्षा बताती है। इसके द्वारा समाज के प्रत्येक व्यक्ति का वास्तविक कल्याण होता है। नैतिक शिक्षा का मूल वेदों में मिलता है। 'सर्वं वेदात् प्रसिध्यति'— इस भारतीय सिद्धान्त से ज्ञात होता है कि अपौरुषेय वेदों से ही समस्त विद्यायें प्रादुर्भूत हुई हैं। वेदों में विधि और निषेध अर्थात् मनुष्यों के कर्तव्य और अकर्तव्य कर्म वर्णित हैं। वेदों के साथ ही ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, गीता, महाभारत, रामायण, पंचतन्त्र, विदुर, शुक्र, भर्तृहरि, आदि ऋषियों के नीति ग्रन्थों में इनका विस्तृत वर्णन है।

हम इस लेख में वाल्मीकि रामायण में वर्णित नैतिक मूल्यों का विवेचन करेंगे।

वाल्मीकि कृत रामायण भारतीय संस्कृति की एक अमूल्य धरोहर है। इसमें सामाजिक, राजनीतिक और अर्थनीति सम्बन्धी मूल्यों का वर्णन मिलता है। आदि कवि वाल्मीकि ने अपने इस काव्य में परिवार, समाज और राष्ट्र के सम्बन्ध में अनेक उत्कृष्ट मानदण्ड निर्धारित किये हैं। कथानक के नायक राम का चरित्र सत्य, दान, तप, त्याग, मैत्री, पवित्रता, करुणा और सरलता से परिपूर्ण है। केवल राम ही नहीं अपितु रामायण के अन्य पात्र भी नैतिकता के उच्च शिखर पर आरूढ़ थे। आज हम देखते हें कि सारे विश्व में हिंसा, द्वेष, असंतोष, पाखण्ड, शंका, लोभ और अहिंसा का साम्राज्य है। ऐसे में यह कालजयी कृति विश्व के भटके हुए लोगों को सार्थक जीवन का पाठ पढ़ा सकती है। ऋग्वेद में कहा गया है— 'मनुर्भव जनया दैवं जनम' अर्थात् मनुष्य मननशील बने और दिव्यगुण वाले पुत्र और शिष्य को उत्पन्न करें। इस प्रकार हमें सच्चे अर्थों में मनुष्य बनने के लिए संवेदनशील मानवता को स्वीकार करना आवश्यक है। निरुक्त में कहा गया है— 'मत्वा कर्माणि सीव्यतीति मनुष्यः' अर्थात् विवेकपूर्ण बुद्धि के अनुसार कार्य करने वाला सच्चे अर्थों में मनुष्य कहलाता है। वाल्मीकि रामायण नामक ग्रन्थ हमें सर्वत्र इसी मानवता का पाठ पढ़ाता नजर आता है। एक सच्चा मानव ही नैतिक मूल्यों का अनुपालन करता है। समाज के नियम हमें कर्तव्याकर्तव्य का ज्ञान कराते हैं। वह हमें सचेत

करते हैं कौन कर्म करणीय है और कौन सा कर्म अकरणीय है।

एक मनुष्य को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाने के लिए जिन सद्गुणों की आवश्यकता होती है, राम उन सबके समुच्चय हैं। वह पवित्रता, सरलता और क्षमाशीलता के गुणों के साथ–साथ सत्यवादी भी हैं–

सत्यं दानं तपस्त्यागो मित्रता शौचमार्जनम्।
विद्या च गुरुशुश्रुषा ध्रुवान्येतानि राघवे।।

राम महाधनुर्धर, वृद्धसेवी, जितेन्द्रिय, उदारचेता, दूसरों के सुख–दुःख के सहभागी और संवेदनशील व्यक्ति हैं।

चरित्रवान् राम के द्वारा परिवार और समाज में व्यवहार करते समय मानो 'लोकं छिद्रं पृण' (यजु0 15/59) के सिद्धान्त को सामने रखकर लोक हितार्थ चिन्तन करते हुए सर्वदा ही वैयक्तिक स्वार्थ को दूर रखा गया है।

सामाजिक और पारिवारिक नैतिक मूल्य

रामायाण में एक ऐसे स्वस्थ समाज की संकल्पना है, जहाँ परस्पर प्रेम, सौहार्द और निश्छलता का साम्राज्य है। पारिवारिक नीति के निर्धारक तत्त्वों में मर्यादा और अनुशासन को सर्वोपरि रखा गया है। रामायण में पग–पग पर 'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव' के वैदिक विचार देखे जा सकते हैं। राम का तो अनन्य विश्वास है कि संसार में माता–पिता के वचनों का सम्मान करना परम धर्म है। रामायण व्यक्ति को पहले मनुष्य और उसके बाद सामाजिक बनाती है।

जिससे अभ्युदय धारण हो वह धर्म है और इस अभ्युदय को प्राप्त करने के लिए जो उपाय हैं, वे नीति कहलाते हैं, इस प्रकार देखा जाये तो दोनों का एक ही अर्थ होता है। कुछ लोग लौकिक अभ्युदय को प्राप्त करने के साधन को 'नीति' और पारलौकिक साधन को धर्म कहते हैं। नीति या नैतिकता से ही शास्त्र और धर्म प्रतिष्ठित होते हैं। नैतिकता के अभाव में शास्त्र और धर्म नष्ट हो जाते हैं। धर्मविहीन नैतिकता का कोई औचित्य नहीं है, भले ही यह आरम्भ में कुछ चमत्कारिक सफलता दिला दे परन्तु अन्ततोगत्वा वह पतन की ओर ही ले जायेगी। मनस्मृति में कहा गया है– 'धर्मो रक्षति रक्षितः' अर्थात् हमारे जीवन में जो स्वाभाविक धर्म और संयम रहता है, वह हमारी रक्षा करता है और जो हम धर्मपूर्वक आचरण या सदाचार करते हैं, वह धर्म हमारी रक्षा करता है। नीति या नैतिकता का मूल ही सदाचार है। धर्म की दृष्टि से नैतिकता के चार पाद हैं–सत्य, तप, दया और पवित्रता। इनमें सत्य को सर्वोपरि माना गया है। सामवेद में कहा गया है–'स्तुहि सत्यधर्माणाम अर्थात् सत्यनिष्ठ की प्रशंसा करे। मुण्डकोपनिष्द् में कहा गया है–

सत्यमेव जयति नानृतं सत्येन पन्था वितो देवयानः। येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्।।

अर्थात् सत्य की विजय होती है, असत्य की नहीं। सत्य धाम में गमन करते हैं जहां सत्य का वह परम आश्रय परमात्मा अनावृत रूप से स्थित है।

तप का अर्थ है– पीड़ा सहना, घोर कड़ी साधना करना, मन का संयम रखना आदि। महर्षि दयानन्द के अनुसार "जिस प्रकार सोने को अग्नि में डालकर इसका मल दूर किया जाता है उसी प्रकार सद्गुणों और उत्तम आचरणों से अपने हृदय, मन और आत्मा के मैल को दूर किया जाना तप है।"

इन्हीं गुणोंको रामायण के किष्किन्धा काण्ड मेंकहा गया है–

दमः शमः क्षमा धर्मो धृतिः सत्यं पराक्रमः।
पार्थिवानां गुणाः राजन् दण्डश्चाप्यपकारिषु।।

अर्थात् इन्द्रिय निग्रह, मनः संयम, क्षमा, धैर्य, सत्य, पराक्रम, अपराधियों को दण्डित करना राजा के कुछ प्रधान गुण हैं।

किष्किन्धा काण्ड में भी कहा गया है–

नयश्च विनयश्चैव निग्रहानुग्रहावपि।
राजवृत्तिरसंकीर्णः न राजा कामवृत्तयः।।

अर्थात् राजा में नैतिकता, नम्रता, निग्रह और अनुग्रह चार गुण अनिवार्य हैं। यही नहीं जो राजा कर लेकर अपने प्रजा पालन रूपी धर्म का निर्वहन

नहीं करता वह नरक का अधिकारी है।

दया की महिमा भी नैतिक कृत्यों के रूप में शास्त्रों में सर्वत्र मिलती है। तुलसीदास कहते हैं–

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छोड़िये जब लौं घट में प्राण।।

मनुष्यों को न केवल शरीर अपितु मन, बुद्धि और आत्मा को भी पवित्र रखना चाहिए।

मनुस्मृति में कहा गया है–

अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति।।

अर्थात् जल से शरीर के बाहरी अवयव, सत्याचरण से मन, विद्या और तप से जीवात्मा और ज्ञान या विवेक से बुद्धि निश्चित रूप से पवित्र होती है।

मानव–जीवन में जो कुछ श्रेष्ठ और नैतिकतापूर्ण है, उसके पीछे विवेक विद्यमान होता है। नीति बोध से जब धर्म का उदय होता है तो मनुष्य अपनी अपूर्णता के प्रति जागरूक हो जाता है। व्यक्तित्व का आध्यात्मिक विकास दिव्य जीवन का शिलान्यास है जो नीतिबोध पर निर्भर रहता है। नीतिबोध की सार्थकता भी दिव्य जीवन की ओर अग्रसर होने में ही है। आदि कवि वाल्मीकि ने राम के माध्यम से उन चौदह दोषों को गिनाया है जो एक राजा के लिए त्याज्य हैं–

नास्तिक्यमनृतं क्रोधं प्रमादं दीर्घसूत्रताम्।
अदर्शनं ज्ञानवतामालसयं पन्चवृतिम्।।
एकचिन्तनमर्थानामनर्थज्ञैश्च मन्त्रणाम्।
निश्चितानामनारम्भं मन्त्रस्यापरिरक्षणम्।।
मंगलाद्यप्रयोगं च प्रत्युत्थानं च सर्वतः।
कच्चित्वं वर्जयस्येतान् राजदोषांश्चतुदर्श।।

अर्थात् नास्तिकता, असत्य भाषण, क्रोध, प्रमाद, दीर्घ सूत्रता (टालमटोल), सज्जनों से न मिलना, इन्द्रियों की परवशता, मंत्रियों की अवहेलना कर अकेले ही राज्य सम्बनधी बातों पर विचार करना, अशुभ चिन्तकों अथवा उल्टी बात समझाने वाले मूर्खों से परामर्ष करना, निश्चित मंगल कृत्यों का त्याग, नीच–ऊँच सबको देख खड़े होना, शत्रुओं का एक साथ आक्रमण– इन चौदह दोषों को क्या तुमने त्याग दिया है?

ये सूत्र वास्तव में ऐसे हैं, जिनका आज भी कुशल राजनीतिज्ञों और शासकों द्वारा पालन किया जाना चाहिए। इस प्रकार वाल्मीकि रामायण में न केवल नीति अपितु राजनीति का भी सम्यक् ज्ञान दिया गया है। सम्पूर्ण विश्व में भारत जैसे धर्माधारित नैतिक मूल्यों का विशाल भण्डार नहीं है और न ही आज की ज्वलन्त समस्याओं को दूर करने हेतु कोई दूसरा मार्ग है। केवल वैदिक सनातन नैतिक पद्धतियों से ही विश्व का कल्याण सम्भव है। यदि अपने नैतिक मूल्यों को सुरक्षित रखना है तो हमें वाल्मीकि रामायण आदि उपरोक्त शास्त्रों से प्रेरणा लेनी होगी। सबसे पहले स्वयं को सुधारते हुए सत्य, प्रेम, दया, अहिंसा, निरव्यसन, जितेन्द्रियता, अक्रोध, अलोभ, परोपकारिता आदि सद्गुणों को अपनाना होगा। नैतिकता के प्रारम्भिक संस्कार माता की गोद से ही बनते हैं। माता की शिक्षा, उसके आदर्श संस्कार और घर का वातावरण बच्चों के कोमल मन का विकास करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। माता–पिता और आचार्य बालक/बालिकाओं के आदि गुरु होते हैं, वे इन आदर्शों को संस्कार रूप में बच्चें में स्थापित करें क्योंकि मनुष्य जीवन की विकासधारा उसके शैशव–कालीन अनुभवों से निर्धारित मार्ग का ही अनुसरण करती है। धर्म, संस्कृति और इतिहास से बच्चों को उपदेशात्मक कथाएं सिखलायी जानी चाहिए जिससे उनमें ईश्वर भक्ति और समर्पण की भावनायें विकसित हों। इस प्रकार की शिक्षा से युवा पीढ़ी में मनसा–वाचा–कर्मणा सत्प्रवृत्तियों का विकास हो सकेगा। यह उनके चरित्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगी और उनमें सत्य, दया, त्याग तप, विनय, न्याय–प्रियता और राष्ट्र प्रेम आदि के गुण विकसित होंगे। प्राचीन परम्परागत नैतिक मूल्यों को पुनः स्थापित करके ही हम विश्व में एक आदर्श और समृद्ध समाज का निर्माण कर सकते हैं।

'मर्यादा पुरुषोत्तम राम का आदर्श, प्रेरक एवं अनुकरणीय जीवन'

—मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

वैदिक धर्म एवं संस्कृति में मर्यादा पुरुषोत्तम राम का जीवन आदर्श, अनुकरणीय एवं प्रेरक उदाहरणों से युक्त जीवन है। वह आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श राजा, आदर्श शत्रु, आदर्श मित्र, ईश्वर, वेद एवं ऋषि परम्पराओं को समर्पित, उच्च आदर्शों एवं चरित्र से युक्त महापुरुष व महामानव थे। त्रेता युग में चैत्र मात्र के शुक्ल पक्ष की नवमी को उनका जन्म पिता दशरथ तथा माता कौशल्या जी के यहां कौशल देश की राजधानी अयोध्या में हुआ था। राजा दशरथ की तीन रानियां कौशल्या, कैकेयी तथा सुमित्रा थी। राम चार भाईयों में सबसे बड़े थे। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उन्होंने वेदों के मर्म को जाना व समझा था तथा उसके अनुसार अपने जीवन को बनाया था। वह प्रजा वत्सल आदर्श राजा थे। उनमें न लोकैषणा थी और न ही वित्त व पुत्र एषणा। उन्होंने एक राजा होकर अपने जीवन में अपने पिता की आज्ञा का पालन का एक ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया जिसकी उपमा विश्व के इतिहास में दूसरी नहीं मिलती। हम सब जानते हैं कि राजा दशरथ ने अपनी पत्नी रानी कैकेयी को युवावस्था में युद्ध में उनकी प्राणरक्षा करने के लिये दो वचन दिये थे। राजा दशरथ ने जब वृद्धावस्था में प्रवेश करते हुए वानप्रस्थी होने का विचार किया और मंत्री परिषद की सम्मति से राम को राजा घोषित किया तो कैकेयी ने इस निर्णय से खिन्न होकर अपने दो वचन मांग लिये थे। इन वचनों को मांगने की प्रेरणा उनकी एक प्रमुख दासी मन्थरा ने की थी। यह वचन थे राम को चौदह वर्ष का वनवास और भरत को अयोध्या का राजा बनाना।

महाराजा दशरथ के सम्मुख कैकेयी को वचन में दिये अपने वचनों को पूरा करने में धर्म संकट उत्पन्न हो गया था। कारण उनका राम के प्रति पुत्र मोह होना था। दूसरा कारण यह भी था कि राम सर्वथा निर्दोष थे और कुल परम्परा व योग्यता की दृष्टि से अयोध्या के राजा बनने के सर्वथा योग्य थे। यह तो हो सकता था कि राम को राजा न बनाया जाये व उनके स्थान पर भरत अयोध्या के राजा बन जायें, परन्तु कैकेयी अपनी दोनी ही बातों को पूरा करने के लिये हठ कर रही थी। इस अभूतपूर्व पारिवारिक परिस्थिति का समाधान राम ने स्वयं को साधु वेश में 14 वर्ष के लिये उसी दिन वन जाने की घोषणा वा निर्णय कर दिया। एक राजा होकर व उसके वैध तरीके से अध्यक्ष व राजा बनाये जाने पर भी उन्होंने राज्य का ही त्याग नहीं किया अपितु अपने पिता के वचनों को सत्य सिद्ध करने, माता कैकेयी की आकांक्षा पूरी करने और अपने छोटे भाई भरत को राजा बनाने के लिये इस अपूर्व त्याग का अद्वितीय आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किया। ईश्वर की कृपा हुई कि बाद में ऋषि वाल्मीकि जी ने राम का जन्म से लेकर राज्याभिषेक तक का इतिहास लिखा जो वाल्मीकि रामायण के रूप में उपलब्ध होता है। इस इतिहास से राम चन्द्र जी के जीवन की प्रत्येक बात को यथार्थ में जानने में आज लगभग 10 लाख वर्षों बाद भी हम समर्थ व सफल हैं। पूरा विश्व वा मानव जाति राम चन्द्र जी के अयोध्या के राजा के पद के त्याग करने सहित पिता की आज्ञा पालन करने के लिये वन जाने, वहां साधु वेश की मर्यादाओं का पालन करते हुए जीवन व्यतीत करने, नगरों में न जाना, पिता दशरथ की मृत्यु के बाद माता कैकेयी व भाई भरत के शुद्ध हृदय से की गई विनती को भी स्वीकार न कर पिता के वचनों को सत्य सिद्ध करने के लिये अडिग रहने आदि उनके निर्णयों की निश्चय ही प्रशंसक है। कुछ अज्ञानी व विकृत

मानसिकता के मनुष्य यदि राम के आदर्श चरित्र को स्वीकार न भी करें तो इससे राम के त्याग व आदर्श कम नहीं होते। अतः राम का आदर्श पूरी मानव जाति के लिए प्रेरक एवं अनुकरणीय है। उनका अनुकरण कर मनुष्य सच्चा ईश्वर भक्त, विद्वानों का भक्त व अनुचर, पितृभक्त, त्यागी, तपस्वी, देशभक्त, धर्म व संस्कृति का प्रेमी, आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श राजा व आदर्श शत्रु के गुणों से युक्त हो सकता है। रामचन्द्र जी के बारे में यह कहावत सत्य चरितार्थ होती है कि जब तक संसार में सूर्य व चन्द्र विद्यमान हैं, राम का यश व कीर्ति संसार में अक्षुण रहेगी।

रामचन्द्र जी के जीवन में अनेक विशेषतायें थी। उन्होंने अत्यन्त विपरीत परिस्थितियों में अपने पिता, अपनी तीनों माताओं तथा भाईयों का सम्मान प्राप्त किया। भरत ने तो उनको इतना सम्मान दिया कि राम की आज्ञा का पालन करते हुए उन्होंने राम के समान त्याग किया और राजधानी अयोध्या से कुछ दूर ग्राम वन के समान वातावरण में रहकर साधुओं का जीवन व्यतीत करते हुए अपने राज्य का संचालन किया। उनके शासन काल में भी अयोध्या में राम राज्य के समान प्रजा समस्त सुखों व सन्तोष से युक्त थी।

राम के वनगमन पर वन में रहकर ईश्वर का ध्यान तथा देश व समाज की सुख व समृद्धि आदि के लिये किये जाने यज्ञों के करने वाले ऋषियों, मुनियों व साधुओं को राक्षसों द्वारा सताने व उनकी हत्या आदि तक करने जैसी समस्यायें सामने आयीं। यहां भी उन्होंने वेदों से प्रेरणा लेकर सभी राक्षस शक्तियों व समुदायों से अकेले व अपने भाई लक्ष्मण के साथ युद्ध किये व सभी शत्रुओं को परास्त ही नहीं किया अपितु सभी प्रमुख राक्षसों का वध कर वनों में ईश्वर की उपासना व भक्ति करने वाले ऋषियों व तपस्वियों को सुखी व निश्चिन्त किया। राम चन्द्र जी का यह कार्य हमारी वर्तमान सरकारों व देशवासियों के लिये प्रेरक है। हमें लगता है कि प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी यथासम्भव राम की नीतियों का पालन कर रहे हैं। 14 वर्षों तक वनों में विचरण करते हुए रामचन्द्र जी ने प्रायः सभी स्थानों को राक्षसों से विहीन कर दिया था।

वनों में भ्रमण करते हुए रामचन्द्र जी अनेक वृद्ध व सिद्ध योगियों सहित अनेक ऋषियों के सम्पर्क में आये थे। उन सबका सान्निध्य भी श्री राम, सीता जी व लक्ष्मण जी ने प्राप्त किया था तथा उनसे सदुपदेश प्राप्त किये थे। यह सदुपदेश वेदों की आज्ञाओं पर प्रकाश डालते थे और उनको मानना व पूरा करना ही रामचन्द्र जी ने एक क्षत्रिय राजा होने के कारण अपना धर्म व कर्तव्य निर्धारित किया था। ऋषियों का आशीर्वाद, उनके द्वारा युद्ध विषयक ज्ञान व अस्त्र शस्त्र प्रदान करने का परिणाम यह हुआ कि रामचन्द्र जी प्रत्येक युद्ध में अकेले ही विजय पाते रहे। उनके पास शारीरिक बल, वीरता, अपने कर्तव्यों का ज्ञान, उन्हें पूरा करने के प्रति निष्ठा तथा आवश्यक अस्त्र शस्त्र उपलब्ध थे। इसका परिणाम ही खर दूषण जैसे प्रतापी राक्षसों के वध, बाली वध, ताड़का वध, कुम्भकरण–मेघनाथ–रावण वध आदि के रूप में हम देखते हैं। रामचन्द्र जी को जिन छोटे राजाओं ने किंचित भी सहयोग दिया, उन्होंने उन्हें अपना मित्र बनाया व आजीवन मित्रता को आदर्श रूप में निभाया भी। उनके कुछ मित्र केवट, सुग्रीव, हनुमान, अंगद, विभीषण आदि के प्रति उनका व्यवहार आदर्श उपस्थित करता है। श्री राम के जीवन में हम उन्हें नारी जाति को सम्मान देते हुए भी देखते हैं। रामचन्द्र जी के युग में नारियों को वेदाध्ययन करने तथा स्वयंवर विवाह करने के अधिकार प्राप्त थे। कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा तथा सीता आदि ने वेदों का अध्ययन किया था। सीता जी को तो वैदेही की संज्ञा प्राप्त है। माना जाता है कि वह चारों वेदों की विदुषी थी। रामचन्द्र जी भी वेदों के विद्वान थे और यजुर्वेद में उनको विशेष प्रवीणता प्राप्त थी। राम चाहते तो उन दिनों सुग्रीव के राज्य व रावण की लंका को अपने राज्य का अंग बना सकते थे परन्तु उन्होंने वेदों की शिक्षाओं से प्रेरणा लेकर किसी राज्य की स्वतन्त्रता का हरण नहीं किया अपितु वहां धर्म परायण राजाओं को स्थापित कर उनको स्वतन्त्र बनाये रखा और उनकी प्रजा को भी सुख व

उन्नति के अवसर प्रदान किये।

रामचन्द्र जी को बाली, रावण व अनेक प्रतापी राक्षसों से इस कारण युद्ध करना पड़ा कि ये सब अधर्म का प्रतिनिधित्व करते थे। इन राजाओं में से किसी का चरित्र उज्जवल व वेदानुकूल नहीं था। उनके राज्य की जनता इनके कुशासन से त्रस्त थी। माता सीता का अपहरण होने पर भी राम ने महाबली राजा बाली से सन्धि नहीं की। ऐसा करके वह सरलता से माता सीता को रावण की कैद से छुड़ा सकते थे। उन्होंने धर्मपालक विस्थापित राजा सुग्रीव का साथ दिया और उसकी सहायता से रावण को अपनी भूल सुधार वा क्षमायाचना करने का अवसर भी दिया। रावण को अपनी शक्तियों का मिथ्या अभिमान था। वह अपने इस अभिमान, अधर्म व दुश्चरित्रता के कारण ही अपने समस्त बन्धुओं व पुत्रों सहित नाश को प्राप्त हुआ। रावण को पराजित कर राम ने उनके भाई विभीषण को जो धर्म–तत्व को जानता व मानता था तथा रामचन्द्र जी का सहयोगी भी था, उसे लंकाधिपति बनाया और वनवास की अवधि पूरी होने पर अयोध्या लौट आये। अयोध्या लौटकर वह अपने भ्राता भरत, शत्रुघ्न तथा माताओं सहित प्रजाजनों व ऋषि मुनियों से मिले थे। सभी ने उनका सम्मान किया था। कुछ ही समय बाद उनका सर्वसम्मति, उत्साह व प्रसन्नता से राज्याभिषेक हुआ और उसके बाद वर्षों तक वह अयोध्या के आदर्श राजा बने रहे। उनका राज्य आदर्श वैदिक राज्य था। रामचन्द्र जी वेदों की सभी शिक्षाओं को मानने वाले विश्व के सबसे महान राजा व महापुरुष थे। उन्होंने अपने पूर्वजों की कीर्ति को बढ़ाया है।

मर्यादा पुरुषोत्तम राम का जीवन चरित्र सभी देशवासियों को पढ़ना चाहिये। स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती द्वारा सम्पादित प्रक्षेप रहित बाल्मीकि रामायण स्वाध्याय का उत्तम ग्रन्थ है। महाभारत युद्ध के बाद वेदाध्ययन में अवरोध होने के कारण अपने देश व समाज में अन्धविश्वास एवं कुरीतियां उत्पन्न हुईं। मूर्तिपूजा, मृतक श्राद्ध व फलित ज्योतिष इसी मध्यकाल की देन हैं। इन अन्धविश्वासों व कुरीतियों के कारण ही देश छोटे छोटे राज्यों में विभक्त हुआ और ईसा की आठवीं शताब्दी में यवनों ने देश के कुछ भागों को गुलाम बनाया। बाबर आदि क्रूर राजाओं ने देश के कुछ भागों पर शासन किया। उसी के शासन में अयोध्या का राम मन्दिर तोड़ा गया था। देश की आजादी के बाद से राम जन्म भूमि मन्दिर की मुक्ति का आन्दोलन व मुकदमा चल रहा था। इस कानूनी लड़ाई में आर्य हिन्दुओं को अयोध्या में राम जन्म भूमि मन्दिर की विवादित भूमि मिली है। बाबर के समय से ही राम जन्म भूमि को विधर्मियों से मुक्त कराने के लिये लाखों आर्यों ने बलिदान दिये हैं। विधर्मियों को मजहब के नाम पर पाकिस्तान भी मिल गया और उन्होंने हमारे देश में आर्यों की मन्दिर आदि की सम्पत्तियों पर भी अवैध कब्जा किया हुआ है। मोदी जी के 6 वर्षों के शासन की अनेक उपलब्धियों में एक यह अयोध्या मन्दिर विवाद का शान्तिपूर्ण हल होना भी सम्मिलित है। राम जन्मभूमि मन्दिर के निमार्ण की प्रक्रिया आरम्भ हो गई है। मोदी जी और योगी जी के नेतृत्व में कार्य योजनाबद्धरूप से चल रहा है। आने वाले दो तीन वर्ष में अयोध्या में जन्मभूमि स्थान पर विश्व का एक भव्य एवं विशाल मन्दिर व स्मारक बनेगा। मन्दिर निर्माण के कार्य में उ.प्र. के मुख्य मंत्री श्री आदित्यनाथ योगी जी का भूमिका भी प्रशंसनीय है।

राम मन्दिर को महापुरुष भगवान रामचन्द्र जी की गरिमा के अनुरूप बनाना चाहिये। रामचन्द्र जी अविद्या, अन्धविश्वास तथा कुरीतियों से कोसों दूर थे। वह निष्ठावान वैदिक धर्मी व ऋषियों के अनुयायी थे। निमार्णाणीन मन्दिर में भी अन्धविश्वासरहित वेदों व वैदिक धर्म की ही प्रतिष्ठा होनी चाहिये। भविष्य में उसे विधर्मियों व आर्य हिन्दू संस्कृति विरोधी शक्तियों से किसी प्रकार की क्षति न हो, इस पर समस्त आर्य हिन्दू जाति को ध्यान देना है। उसके उपाय किये जाने चाहियें। ईश्वर करे कि इस देश का हर बच्चा राम के आदर्श को अपनाये और अपने जीवन को सफल करे। ओ३म् शम्।

आर्यसमाज एक अद्वितीय धार्मिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय संगठन है

—मनमोहन कुमार आर्य

संसार में किसी विषय पर सत्य मान्यता एक व परस्पर पूरक हुआ करती हैं जबकि एक ही विषय में असत्य मान्यतायें अनेक होती व हो सकती हैं। संसार में ईश्वर व धर्म विषयक मान्यतायें भी एक समान व परस्पर एक दूसरे की पूर्वक होती हैं। इसी कारण से संसार में ईश्वर एक ही है यद्यपि उसके अनेकानेक गुण, कर्म व स्वभावों के कारण उसके अनेक नाम हैं। ईश्वर का मुख्य नाम ''ओ३म्'' है और उसके अन्य सब नाम गौणिक, उसके कर्मों तथा उससे हमारे सम्बन्धों के सूचक हैं। श्रेष्ठ कर्मों के समुच्चय व क्रियाओं को धर्म की संज्ञा दी जाती है। अग्नि का गुण दाह, प्रकाश वा रूप आदि होता है। यही अग्नि का धर्म है। इसी प्रकार वायु का गुण स्पर्श है। वायु का हम श्वास लेने में उपयोग करते हैं। अतः प्राणियों को श्वास लेने में सहयोगी पदार्थ को वायु कहा जाता है। वायु का धर्म है कि वह प्राणियों को श्वास लेने में सहायता दे। इसका यह गुण ही उसका धर्म है। इसी प्रकार से मनुष्य का धर्म भी सत्य ज्ञान व उस पर आधारित क्रियायें वा कर्म होते हैं जिससे मनुष्य का अपना तथा दूसरे मनुष्यों व प्राणियों का कल्याण होता है। धर्म का शब्दार्थ है, मनुष्य द्वारा धारण करने योग्य गुण, कर्म व स्वभाव। सब मनुष्यों को सत्य अर्थात् सत्य गुणों व कर्मों को धारण करना चाहिये। इसी से मनुष्य का कल्याण होता है। अतः सत्य गुणों को धारण करना ही मनुष्य का धर्म होता है। मत–मतान्तर तो अनेक हो सकते हैं व हैं भी, परन्तु धर्म सभी मनुष्यों का एक ही होता है।

ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, सर्वव्यापक, अनादि, नित्य व सृष्टिकर्ता है। यह विचार व मान्यता सत्य है, इस कारण इसका प्रत्येक मनुष्य को मानना धर्म है। जो ऐसा नहीं करता व नहीं मानता वह धार्मिक कदापि नहीं कहा जा सकता। सत्य व सत्यधर्म को न मानने वाला मनुष्य आकृति मात्र से ही मनुष्य होता है परन्तु गुण, कर्म व स्वभाव की दृष्टि से उसे सदाचार व सज्जन मनुष्य नहीं कहा जा सकता। जो मनुष्य व संगठन सत्य को स्वीकार न करें, उसका अस्तित्व देश व समाज के लाभ के लिये न होकर उनके लिये हानि करने वाला सिद्ध होता व हो सकता है। अतः मनुष्य व समाज को अपने सभी कार्यों में सत्य को सर्वोपरि स्वीकार करना चाहिये। आर्यसमाज ऐसा ही संसार का एकमात्र संगठन है जो मनुष्य व समाज में प्रत्येक विचार व मान्यता की परीक्षा कर सत्य का स्वीकार व असत्य का त्याग करता व कराता है। इस कारण से संसार में कोई संगठन आर्यसमाज के समान महान उद्देश्यों से युक्त दृष्टिगोचर नहीं होता। आर्यसमाज में आकर मनुष्य की बुद्धि का अधिकतम वा पूर्ण विकास होता व हो सकता है और वह देश व समाज के लिये लाभदायक एवं हितकर मनुष्य सिद्ध होता है। सत्य को मानने व आचरण में लाने के कारण संसार के रचयिता व पालनकर्ता ईश्वर का प्रेम, स्नेह, आशीष तथा कृपा भी सच्चे मनुष्य वा आर्यसमाज के निष्ठावान अनुयायी को प्राप्त होती है। उसका शारीरिक, आत्मिक तथा सामाजिक विकास होता है। आत्मिक विकास केवल और केवल सत्य को मानने व उसके अनुसार आचरण करने वालों का ही होता है अन्यों का नहीं, ऐसा हमें वैदिक साहित्य को पढ़कर व समाज में लोगों का जीवन देखकर अनुभव होता है।

आर्यसमाज से जुड़कर हम सीधे परमात्मा व उसके सब सत्य विद्याओं से युक्त ज्ञान ''चार वेदों'' से जुड़ जाते हैं। परमात्मा से तो संसार के बहुत से लोग जुड़े हैं परन्तु सबमें यह विशेषता नहीं है कि वह ईश्वर के जिस स्वरूप व गुण, कर्म व स्वभावों को मानते हैं उनकी सत्यता की परीक्षा कर सकें व उनके आचार्यों द्वारा ऐसा किया गया व किया जाता

हो, ऐसा देखने को नहीं मिलता। ईश्वर के सत्यस्वरूप व गुण, कर्म व स्वभावों की परीक्षा आर्यसमाज के साथ जुड़कर करने का अवसर मिलता है तथा ईश्वर के सत्यस्वरूप को जानकर उसके अनुसार ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना करने का अवसर भी सुलभ होता है। ईश्वर के सत्यस्वरूप को जानने व उसकी उपासना करने से अनेक लाभ होते हैं। ईश्वर एक अनादि व नित्य सत्ता है जो संसार में अनादि काल से है और अनन्त काल तक रहेगी। हम जीव हैं और हम भी अनादि व नित्य सत्ता हैं। हमारी न तो उत्पत्ति हुई है न कभी नाश होगा। ईश्वर व जीव अर्थात् मैं और मेरा परमात्मा दोनों सनातन व नित्य होने के कारण अनादिकाल से एक दूसरे के मित्र व सखा हैं। ईश्वर से हमारा व्याप्य–व्यापक, उपास्य–उपासक, स्वामी–सेवक तथा पिता–पुत्र आदि का सम्बन्ध है। ईश्वर अजन्मा है तथा जीव जन्म–मरण धर्मा है। जीवात्मा का जन्म व मृत्यु होती रहती है। हमें हमारा जन्म हमारे पूर्व जन्मों के कर्मों के अनुसार मिलता है। हमारे कर्मानुसार हमें मनुष्य व देव तथा पशु–पक्षी आदि योनियों में भी जन्म मिल सकते हैं। मनुष्य योनि में सुख अधिक तथा दुःख कम होते हैं। अन्य योनियों में मनुष्य योनि से अधिक दुःख व कष्ट होते हैं। मनुष्य योनि इससे पूर्व की मनुष्य योनि में अधिक पुण्य व शुभ कर्म करने से मिलती है।

ईश्वरोपासना तथा अग्निहोत्र यज्ञ आदि श्रेष्ठ कर्मों को करने से मनुष्य योनि में देवों का शरीर मिलना सम्भव होता है। यह लाभ हम आर्यसमाज से जुड़कर तथा वेदाचरण कर अपने परजन्मों में प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिये हमें ईश्वरीय कर्म–फल विधान का ज्ञान होना चाहिये और हमें ईश्वर द्वारा वेदों में मनुष्य के विहित कर्मों को जानकर उनका सेवन करना चाहियें। आर्यसमाज से जुड़ने व इसका सक्रिय सदस्य बनने पर वैदिक साहित्य का अध्ययन वा स्वाध्याय करने का अवसर मिलता है। इससे मनुष्य की आत्मिक उन्नति होने से वह ईश्वरीय ज्ञान वेद व मनुष्य जीवन के अनेकानेक व सभी रहस्यों से परिचित हो जाता है। इससे यह लाभ होता है कि मनुष्य सुख देने वाले कर्मों को ही करता है और जिन कर्मों का परिणाम दुःख होता है, उन्हें जानकर उनको करना छोड़ देता है। वेदानुयायी मनुष्य यह जानता है कि राग व द्वेष दोनों मनुष्यों के लिये हानिकर होते हैं। इनके वशीभूत जो कर्म होते हैं वह परिणाम में दुःख देते हैं। अतः वह राग व द्वेष को जानकर उनके स्थान पर वैराग्य के विचारों तथा द्वेष मुक्त होकर सब प्राणियों को अपनी आत्मा के समान जानकर अपनी और सबकी उन्नति के लिये पुरुषार्थ करता है। ऋषि दयानन्द और अन्य वैदिक महापुरुषों स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज, पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी आदि के जीवन में हम साक्षात ऐसा होता हुआ देखते हैं।

आर्यसमाज से जुड़कर हमें वेदों का महत्व बताने वाला, प्रायः सभी वैदिक मान्यताओं से परिचित कराने वाला और साथ ही सत्य व असत्य का स्वरूप प्रस्तुत करने वाला ग्रन्थ ''सत्यार्थप्रकाश'' पढ़ने को मिलता है। सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ में मनुष्य के जीवन के लिये उपयोगी सभी विषयों का वेद प्रमाणों से युक्त तर्क एवं युक्ति संगत ज्ञान प्रस्तुत किया गया है। इससे मनुष्य की सभी भ्रान्तियां एवं आशंकायें दूर हो जाती है। वह ईश्वर व जीवात्मा विषयों सहित संसार एवं अपने जीवन सबंधी विषयों को यथार्थरूप से जानने में समर्थ होता है। उसे यह भी विदित होता है कि वेद मत से इतर सभी मतों में अविद्या विद्यमान है। इसका दिग्दर्शन सत्यार्थप्रकाश के ग्रन्थकार ऋषि दयानन्द जी ने इस ग्रन्थ के उत्तरार्ध के चार समुल्लास लिखकर कराया है। इनसे यह लाभ होता है कि हम सभी मत–मतान्तरों की अविद्या से परिचित हो जाते हैं और उसे छोड़कर जीवन में होने वाली अनेक हानियों से बच जाते हैं। इनसे हमारा समय भी बचता व उस बचे समय का सदुपयोग सत्कर्मों में करते हैं। उस समय को हम ईश्वर की उपासना, अग्निहोत्र व देश तथा समाज के हित के कार्यों में कर सकते हैं।

आर्यसमाज का महत्व आर्यसमाज का सक्रिय सदस्य बनकर तथा आर्यसमाज एवं समस्त वैदिक साहित्य का अध्ययन कर ही विदित होता है। हम यहां बानगी के तौर पर आर्यसमाज के 10 नियमों

को प्रस्तुत कर रहे हैं। ऐसे स्वर्णिम नियम हमें किसी मत व संगठन में दृष्टिगोचर नहीं होते। अतः अपने मनुष्य जीवन की उन्नति करने का उद्देश्य लिये हुए बन्धुओं को आर्यसमाज की शरण में आकर अपने जीवन की उन्नति करनी चाहिये और अपने परजन्म को भी सुरक्षित व सफल बनाने का प्रयत्न करना चाहिये। आर्यसमाज के दस नियमों में प्रथम नियम है 1– सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जते हैं, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है। दूसरा नियम है ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है। तीसरा नियम है 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।'' आर्यसमाज का चौथा नियम है 'सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।' अन्य नियम हैं 5– सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करने चाहियें। 6– संसार का उपकार करना इस (आर्य)समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। 7– सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिये। 8– अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये। 9– प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये। अन्तिम दसवां नियम है 'सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।' इन नियमों की दृष्टि से भी आर्यसमाज एक सार्वभौमिक संगठन व आन्दोलन सिद्ध होता है जिसका उद्देश्य मनुष्य, समाज व विश्व का उपकार करना है। आर्यसमाज सत्य का ग्रहण कराता और असत्य को छुड़वाता है। इसके साथ ही आर्यसमाज अविद्या के नाश और विद्या की वृद्धि के प्रयत्न करता है। इन सभी कार्यों व अपने स्वर्णिम इतिहास के कारण आर्यसमाज विश्व का सर्वोत्म संगठन है जो वैदिक सत्य धर्म का प्रचार व प्रसार तथा संवर्धन करता है। सभी मनुष्यों को आर्यसमाज वा वैदिक धर्म की शरण में आकर धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त होना चाहिये। इससे बढ़कर कुछ प्राप्तव्य नहीं है। ओ३म् शम्।

पं. शिवपूजनसिंह कुशवाह ग्रन्थावली का तीन खण्डों में भव्य प्रकाशन

आर्यजगत के स्वाध्यायशील पाठकों के लिये शुभ समाचार है कि आर्यसमाज के शीर्ष विद्वान पं. शिवपूजनसिंह कुशवाह जी के सभी ग्रन्थों को एक भव्य ग्रन्थावली के रूप में प्रकाशन की योजना हितकारी प्रकाशन समिति, हिण्डोन सिटी के संचालक ऋषि भक्त श्री प्रभाकरदेव आर्य जी ने बनाई है। तीन खण्डों में प्रकाशित की जा रही ग्रन्थावली के सम्पादक आर्यसमाज के यशस्वी विद्वान डा. ज्वलन्त कुमार शास्त्री जी हैं। ग्रन्थावली का प्रथम खण्ड प्रकाशित होकर अग्रिम पाठकों को प्रेषित किया जा चुका है। सूचना है कि हितकारी प्रकाशन योजना आर्थिक घाटे में चल रही है। इस विपरीत परिस्थिति और कोरोना महामारी के समय में समिति ने डा. शिवपूजनसिंह कुशवाह जी के लगभग 55 ग्रन्थों को भव्य रूप में प्रकाशित कर ऋषिभक्तों को ज्ञान का भण्डार प्रस्तुत करने का जो सत्साहस एवं प्रयास किया है वह अभिनन्दनीय है। श्री प्रभाकरदेव आर्य और ग्रन्थावली के सम्पादक डा. ज्वलन्तकुमार शास्त्री जी को वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून की ओर से शुभकामनायें एवं बधाई।

'वेदोक्त 'आत्मदाः' शब्द पर विचार'

–डॉ. जयदत्त उप्रेती

हम लोग नित्यप्रति यज्ञादि के आरम्भ में ईश्वर–स्तुतिप्रार्थनोपासना के जो आठ मन्त्रों का पाठ किया करते हैं, उनमें तीसरा मन्त्र है–

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।। (यजुर्वेदः, 25–13)

इस मन्त्र में 'आत्मदाः' शब्द के अर्थ के विषय में बहुत दिनों से मेरे मन में उत्कंठा हो रही थी कि प्रचलित आर्यसमाज की सन्ध्या–यज्ञ की पुस्तकों में तथा संस्कारविधि पुस्तक में ''आत्मज्ञान का दाता'' यह अर्थ मूलतः महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा लिखा हुआ मिलता है, उस पर कुछ विचार होना चाहिए। इसी सम्बन्ध में यह लेख प्रस्तुत है।

यह मन्त्र यजुर्वेद की वाजसनेयि–माध्यन्दिनी संहिता में ही नहीं अपितु ऋग्वेद संहिता 10–121–2, अथर्ववेद 4–2–1, 13–3–24, काण्व संहिता 27–17, तैत्तिरीय संहिता 4–1–8–15, 7–5–17–1, संस्कारविधि ईश्वर स्तुतिप्रार्थनोपासना, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ईश्वरप्रार्थना विषय, आर्याभिविनय 2–48 में भी विद्यमान है। (देखें पादटिप्पणी 1)

आत्मदा शब्द आत्मा और दा धातु के योग से निष्पन्न उपपद तत्पुरुष समास है जिसका अर्थ है 'आत्मा को देने वाला'। इसी प्रकार बलदा शब्द का अर्थ है बल को देने वाला। दोनों को देने वाला सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक ईश्वर है। प्रश्न होता है आत्म शब्द से क्या अर्थ अभिप्रेत है? क्योंकि कोशकारों ने आत्मा के अनेक अर्थ बतलाये हैं। जैसे कि अमर कोश के अनुसार क्षेत्रज्ञ पुरुष, यत्न, धृति, बुद्धि, स्वभाव, ब्रह्म, वर्ष्म (शरीर), स्वयम् (अपने आप) है। (देखें पादटिप्पणी 2)। शब्दार्थ चिन्तामणि के अनुसार आत्मा पुल्लिंग शब्द है। स्वभाव अर्थ में प्रयुक्त होता है, जैसे कि पुण्यात्मा। प्रयत्न अर्थ में, जैसे कि महात्मा। शरीर अर्थ में, जैसे कि कृष्णात्मा। परव्यावर्तन में, जैसे कि मैत्रेणात्मना कृतम्, मन, धृति, मनीषा, सूर्य, अग्नि, वायु, जीव, क्षेत्र, त्वं पदार्थ, नित्योपलब्धिस्वभाव, प्रत्यगात्मा, जैसे कि प्रत्यग्रूपः। पराग्रूपरो व्यावृत्त अनुभवात्मक।

प्रधते यः स आत्मेति प्राहुरात्मविदो बुधाः। अवस्थात्रयभावाभावसाक्षित्वेन सत्वज्ञानादिस्वरूपे। निरुपचरितस्वरूपे। ज्ञानस्मृत्योराश्रये। सर्वजन्तूनां प्रत्यक्चेतने स्वस्विधे प्रसिद्धे।

भूतात्मा चेन्द्रियात्मा च प्रधानात्मा तथा भवान्।
आत्मा च परमात्मा च त्वमेकः पंचधा स्थितः।।
त्यज्यमानेऽपि न त्यक्तः प्राप्यमाणोऽपि नाप्यते।
आगमापायि साक्षी यः स आत्मानुभवात्मकः।
विशुद्धरुपे त्वंपदलक्ष्ये तुरीयेऽअहंप्रत्ययवेद्ये।।
इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिंगमिति।
न्यायसूत्रम् 1–10

यच्चाप्नोति यदादत्ते यच्चात्ति विषयानिह। यच्चास्य सन्ततो भावस्तस्मादात्येतिकीर्तितः। अतति सन्ततभावेन जागृतादिसर्वावस्थास्वनुवर्तमाने। अत सातत्यगमने सातिभ्यां मनिन्मनिणाविति मनिण्। भावे ब्रह्मणि। यथा आत्मेवेदं सर्वम्। हार्दाकाशे। (देखें पादटिप्पणी 3)

इस प्रकार आत्मा शब्द के जीवात्मा और परमात्मा (ईश्वर) इन दो प्रसिद्ध अर्थों के अतिरिक्त (अन्य भी) मन, बुद्धि आदि अन्तःकरण, स्वभाव, शरीर, प्राण को भी आत्मार्थ बतलाया गया है। ऋषि दयानन्द ने संस्कारविधि के उपर्युक्त अर्थ के अलावा स्वरचित यजुर्वेदभाष्य, आर्याभिविनय तथा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में कुछ भिन्न प्रकार से भी आत्मदाः, बलदाः शब्दों का अर्थ किया है। जैसे कि

यजुर्वेदभाष्य 25–13 में लिखा है, जो आत्मा को देता है वह और जो बल को देता है, वह ईश्वर ..... इत्यादि।

उधर आर्याभिविनय में लिखा है–''हे मनुष्यों! जो परमात्मा अपने लोगों को 'आत्मदाः' आत्मा का देने वाला तथा आत्मज्ञानादि का दाता है, जीव प्राणदाता तथा 'बलदाः' विविध बल– एक मानस विज्ञानबल, द्वितीय इन्द्रियबल अर्थात् श्रोत्रादि की स्वस्थता, तेजोवृद्धि, तृतीय शरीर बल, नाम नैरोग्य, महापुष्टि दृढांगता और वीर्यादिवृद्धि इन तीन बलों का जो दाता है .....। (देखें पादटिप्पणी 4)

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में लिखा है– जो जगदीश्वर अपनी कृपा से ही अपने आत्मा का विज्ञान देने वाला है, जो सब विद्या और सत्य सुखों की प्राप्ति कराने वाला है (जो शरीर, इन्द्रिय प्राण आत्मा और मन की पुष्टि उत्साह पराक्रम और दृढता का देने वाला है) जिसकी उपासना सब विद्वान् लोग करते आये हैं, जिसका अनुशासन जो वेदोक्त शिक्षा है, उसको अत्यन्त मान्य से सब शिष्ट लोग स्वीकार करते हैं .....। (देखें पादटिप्पणी 5)

यहां पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, जब स्वामी जी स्पष्ट लिखते हैं 'वह ईश्वर हम सब मनुष्यों को अपने आत्मा का ज्ञान देने वाला है' तब मुझे तो यही अर्थ सबसे उत्तम लगता है क्योंकि चारों वेदों में इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि आदि अनेक नामों से परमेश्वर का गुणगान किया गया है और उसकी महिमा गायी गयी है। उसी के लिए कहा गया है, 'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति' (देखें पाद टिप्पणी 6)। इसलिए आत्मज्ञान का दाता का तात्पर्य है कि ईश्वर नाना नामों और वेदमन्त्रों के द्वारा अपने स्वरुप का ज्ञान, भक्ति और उपासना का उपदेश करता है। इसके साथ ही स्वयं सृष्टिकर्ता होने से सृष्टिगत पदार्थों का ज्ञान और उनके यथायोग्य उपयोग लेने, मनुष्यों को कर्तव्य कर्मों का पालन करने तथा निषिद्ध कर्मो के त्याग करने का भी उपदेश करता है। उसी ईश्वर द्वारा 'ईशावास्यमिदं सर्वम्0, स पर्यागाच्छुक्रमकायमव्रणम्स्नारिम् शुद्धम्पापविद्धम्0 इत्यादि मन्त्रों से अपने रूप सर्वव्यापकत्व, सर्वज्ञत्व, निराकार, निर्विकार, शुद्ध पवित्र, सर्वशक्तिमान् के बोधक मन्त्रों में अपने अनादि अनन्त अनुपम शाश्वत सत्य स्वरूप का स्वयं निर्देश भी किया गया है और वही पापियों के अच्छे बुरे कर्मों के अनुसार सुख–दुःख रूपी फलों का दाता तथा सर्वान्तर्यामी है। अतः उन सब हेतुओं से स्पष्ट है कि 'आत्मदा' शब्द का अर्थ ईश्वर अपने स्वरूप का तथा जीवात्माओं का गुण–धर्म सम्बन्धी ज्ञान–विज्ञान का प्रदान करने वाला है।

इसी क्रम में एक बात और विचारणीय है। वह यह कि जैसा कि ऊपर कहा गया है, कोशकारों ने आत्मा शब्द का एक अर्थ वर्ष्म अर्थात् शरीर भी बतलाया है। यह बात भी ऋग्वेद के दशम मण्डल के 163वें सूक्त के, विशेषतः पांचवें और छठे मन्त्रों में पठित 'सर्वस्मादात्मनः' शब्द से सिद्ध होती है, जहां कि आत्मा, इन्द्रियां, मन तथा शरीर (जिसको कठोपनिषद् के शब्दों में भोक्ता कहा गया है) (देखें पादटिप्पणी 7) सहित सम्पूर्ण शरीर के मूत्रेन्द्रिय, रोमों तथा नाखूनों आदि से यक्ष्मा रोग को औषधोपचार से निकाल बाहर करने का निर्देश किया गया है। (देखें पादटिप्पणी 8)। यहां सर्वस्मादात्मनः का अर्थ जीवित सारे शरीर के अंग अंग से रोग दूर करने का वर्णन है, न कि केवल आत्मा से।

इस दृष्टि से आत्मदाः का एक अर्थ यह भी हो सकता है कि ईश्वर ही मातृगर्भ में निर्मित होने वाले शिशु शरीर को तथा उस में प्राणेन्द्रिययुक्त आत्मा (जीवात्मा) को पहुंचाता है। इतिशुभम्।

———————

1– चतुर्वेदमन्त्रानुक्रमसूची, पृष्ठ 294 (आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली), **2**– अमरकोशः 4–29, 23–109, 1–1–16 (ब्रह्मात्मभूः अर्थात् स्वयम्भूः), **3**– शब्दार्थचि0 पृष्ठ 255–256, **4**–आर्याभिविनय 2–48, **5**– ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका प्रार्थनाविषय, **6**– ऋग्वेद 1–164–46, **7**– कठोपनिषत् 1–3–4, 8– मेहनाद्वनंकरणाल्लोमभ्यस्ते नखेभ्यः। यक्ष्म सर्वस्मादात्मनस्तमिदं वि वृहामि ते।। अंगादंगाल्लोम्नोलोम्नो जातं पर्वणिपर्वणि। यक्ष्मं सर्वस्मादात्मनस्तमिदं वि वृहामि ते।। (ऋग्वेद 10–163–5, 6)

'मृतक श्राद्ध का विचार वैदिक सिद्धान्त पुनर्जन्म के विरुद्ध है'

—मनमोहन कुमार आर्य

महाभारत युद्ध के बाद वेदों का अध्ययन–अध्यापन अवरुद्ध होने के कारण देश में अनेकानेक अन्धविश्वास एवं कुरीतियां उत्पन्न हुईं। सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर से प्राप्त वैदिक सत्य सिद्धान्तों को विस्मृत कर दिया गया तथा अज्ञानतापूर्ण नई–नई परम्पराओं का आरम्भ हुआ। ऐसी ही एक परम्परा मृतक श्राद्ध की है। मृतक श्राद्ध में यह कल्पना की गई है कि हमारे मृतक पूर्वज व पितरों को वर्ष में एक बार आश्विन महीने के कृष्ण पक्ष में आवाहन कर भोजन एवं उनकी प्रिय वस्तुओं के दान से उन्हें सन्तुष्ट करना चाहिये। यह उच्च मानवीय भावना तो है परन्तु यह सत्य पर आधारित न होने से एक आधारहीन व अनावश्यक परम्परा व कार्य है। इससे मनुष्य जाति की उन्नति न होकर अवनति होती है। इसे व्यवहारिक रूप दिया ही नहीं जाता अर्थात् मृतक पितरों को भोजन कराया ही नहीं जा सकता। यह एक ऐसा अन्धविश्वास है जिसे हम अपनी आंखें मूंद कर करते है। मृतक श्राद्ध करने पर कोई मृतक पितर व पूर्वज सशरीर भोजन करने श्राद्ध स्थान पर उपस्थित नहीं होता। उनके नाम पर जन्मना ब्राह्मण कहे जाने वाले लोगों को पकवान व भोजन परोसे जाते हैं, दान दक्षिणा दी जाती है और यह मान लिया जाता है कि हमारे मृतक पितर व पूर्वज हमारे कराये भोजन से सन्तुष्ट हो गये हैं। यह एक ऐसी परम्परा व धारणा है जिसे हम ज्ञान व विज्ञान के आधार पर प्रस्तुत नहीं कर सकते। वेदों में इसका कहीं विधान नहीं है।

वेद व वैदिक परम्परा में हम परिवार के जीवित माता, पिता, पितामह, पितामही, प्रपितामह तथा प्रपितामही की ही श्रद्धापूर्वक सेवा करने तथा उन्हें अपने आचरण एवं व्यवहार से सन्तुष्ट रखने का विधान है। मध्यकाल के जिन दिनों में इस मृतक श्राद्ध परम्परा को आरम्भ किया गया, उस अवसर पर इस बात को विस्मृत कर दिया गया कि घर के जीवित पितरों माता, पिता से प्रपितामह व प्रपितामही का श्राद्ध तो प्रतिदिन करने की आवश्यकता व विधान है। मृतक पितरों पर यह लागू ही नहीं होता। मृतक परिजनों के मरने के बाद कुछ ही दिनों व महीनों में ईश्वर की व्यवस्था से वह अपने जीवन के शुभ व अशुभ अथवा पुण्य व पाप कर्मों का फल भोगने के लिये कर्मानुसार नये जन्म को प्राप्त हो जाते हैं। वहां उनकी व्यवस्था सर्वव्यापक, सबके आधार तथा सबके धारणकर्ता परमात्मा की कृपा से वह स्वयं व उन जीवात्माओं के नये जीवन के परिवारजन करते हैं। हमारे भोजन कराने से हमारे मृतक किसी पितर को भोजन पहुंचना सर्वथा असम्भव है। अतः वेदों के शीर्ष वेदाचार्य ऋषि दयानन्द ने इस वेदविरुद्ध प्रथा को अस्वीकार कर पंचमहायज्ञों के अन्तर्गत पितृ–यज्ञ करते हुए अपने घर के सभी जीवित पितर व वृद्धों की आदर व सम्मान से सेवा करने व उन्हें भोजन, वस्त्र एवं ओषधि आदि से सन्तुष्ट रखने के विधान को जारी रखा है और जीवित पितरों की सेवा व उनको सन्तुष्ट रखने को ही वैदिक सत्य परम्परा का श्राद्ध कर्म माना है।

मनुष्य व सभी प्राणी एक सत्य व चेतनता के गुण से युक्त एकदेशी, ससीम, अनादि, नित्य, अल्पज्ञ, कर्म–फल के भोक्ता, मनुष्य योनि में कर्म करने में स्वतन्त्र तथा कर्मों के फल भोगने में परतन्त्र जीवात्मा होते हैं। कर्म ही जन्म का परिणाम होते हैं। हमारा वर्तमान जन्म भी हमारे पूर्वजन्म के पाप–पुण्य कर्मों का फल भोगने के लिये हुआ है और हमारी मृत्यु हमारे शरीर की जन्म, वृद्धि व नाश के सिद्धान्त के आधार पर वार्धक्य में रोग आदि कारणों से होती है। 'जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु ध्रुवं जन्म मृतस्य च' सिद्धान्त के अनुसार जिस जीवात्मा का जन्म हुआ है उसकी मृत्यु और जिसकी मृत्यु होती है उसका जन्म होना निश्चित व ध्रुव सत्य है। इस सिद्धान्त के अनुसार मृत्यु के बाद जीवात्मा का नया जन्म हो जाता है। नये जन्म में उसे माता, पिता, भाई, बन्धु व

परिजन सब प्राप्त होते हैं और वह स्वयं व परिवार के सहयेाग से भोजन सहित अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। उसे अपने पुराने जन्म स्थान के सम्बन्धियों से भोजन प्राप्त करने की किंचित भी आवश्यकता नहीं है। मृतक श्राद्ध विषयक विचार व मान्यतायें काल्पनिक हैं। वेदों व ऋषियों के ग्रन्थों में इस मान्यता का कहीं आधार नहीं है। अतः इस वेद–विरुद्ध कार्य को हमें करना नहीं चाहिये। यह अविद्यायुक्त कार्य है। इसे हम वेद, वैदिक साहित्य सहित ऋषि दयानन्द के द्वारा अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में प्रस्तुत विचारों व वैदिक सिद्धान्तों का अध्ययन कर जान सकते हैं व सभी अवैदिक कृत्यों को करना छोड़ सकते हैं। अविद्या दूर करने का यही उपाय है कि वेद व वैदिक साहित्य सहित सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ का अध्ययन किया जाये और प्रत्येक कार्य को सत्य व असत्य का विचार कर, उसकी परीक्षा कर, उसके तर्क एवं युक्तिसंगत होने के साथ वेद से पुष्ट होने पर ही स्वीकार किया जाये। ऐसा करने से हम अपने मनुष्य जीवन को सार्थक कर जीवन के लक्ष्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त हो सकते हैं। ऐसा न करने से हम अपने जीवन के लक्ष्य आत्मोन्नति व मोक्ष से दूर होते जाते हैं जिसे करना किसी भी मनुष्य के लिये उचित नहीं है। अतः मृतक श्राद्ध को करने से पूर्व इस विषय का विशद अध्ययन कर इसकी आवश्यकता, इससे सम्भावित लाभों की पूर्ति तथा मृतक पितरों की अवस्था एवं आवश्यकताओं पर वेद के परिप्रेक्ष्य तथा सामान्य ज्ञान के अनुसार भी विचार कर लेना चाहिये। ऐसा करने से हम सत्य निर्णय कर एक सत्य परम्परा का निर्वहन करने में समर्थ होंगे जिसका करना हमारे मनुष्य होने अर्थात् मननशील होने व सत्य का ग्रहण तथा असत्य का त्याग करने की दृष्टि से आवश्यक है।

सनातन वैदिक धर्म आत्मा के जन्म व मरण के सिद्धान्त अर्थात् पुनर्जन्म को स्वीकार करता है। जन्म के समय हमारे सभी संबंध बनते हैं तथा मृत्यु होने पर सभी सम्बन्ध समाप्त हो जाते हैं। मृत्यु होने पर न तो मृतक आत्मा को अपने पूर्व संबंधों व संबंधियों का ज्ञान रहता है और न ही जीवित परिजनों को आत्मा का पता होता है कि मृत्यु के बाद उसका कहां, किस योनि व अवस्था में जन्म हुआ है अथवा उसका मोक्ष हुआ या नहीं हुआ है। ऐसी अवस्था में अपने परिजनों की मृत्यु के बाद उनका वर्ष में एक बार आश्विन माह में मृतक श्राद्ध करना उचित नहीं है। जब हमारा दूसरों को कराया भोजन सम्मुख उपस्थित मनुष्य तक ही नहीं पहुंचता, तो मरे पीछे वह उन आत्माओं तक किसी रीति से पहुंच सकता है, ऐसा मानना कल्पना मात्र है। बिना वेद विधान व ऋषियों की सत्योक्त बातों के हमें किसी भी अन्धविश्वास व परम्परा को न तो मानना चाहिये न ही उसका समर्थन करना चाहिये। हमारी आर्य जाति का पतन इन व ऐसी काल्पनिक मान्यताओं व सिद्धान्तों का अनुसरण तथा सत्य वैदिक सिद्धान्तों को छोड़ देने के कारण से ही हुआ है। अतः सत्यासत्य का विचार कर सत्य सिद्ध कार्यों को ही करना मनुष्यों के लिए उचित व विपरीत का छोड़ना आवश्यक है।

हमारा सौभाग्य है कि आर्यजाति को पांच हजार वर्षों के बाद ऋषि दयानन्द नाम के एक सच्चे योगी व वेद ऋषि प्राप्त हुए थे। उन्होंने वेदों का उद्धार कर वेद के सत्य अर्थों का प्रचार किया था। उनकी सभी मान्तयायें वेद तथा तर्क व युक्ति पर आधारित हैं। उन्होंने ही हमें ईश्वर के सच्चे स्वरूप के दर्शन कराये और ईश्वर का ध्यान करने की विधि तथा वेद व ऋषियों की आज्ञाओं का पालन करते हुए प्रतिदिन पंचमहायज्ञों को करने की आज्ञा से परिचित कराया। हमारा सौभाग्य है कि हम आर्यों के पांच महाकर्तव्य रूप पंचमहायज्ञों को करते हैं जिसका परिणाम मनुष्य की शरीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति होती है और वृद्धावस्था में मृत्यु व शरीर परिवर्तन होने सहित जन्म व मरण से अवकाशरूप मोक्ष प्राप्ति के रूप में होती है। हमें न केवल स्वयं ही वेदों का पालन व आचरण करना है अपितु अपने परिवार व संबंधियों सहित सृष्टि के जन–जन में वेद प्रचार कर उनसे भी वेदाचरण करवाना है। ऐसा करने से ही हमारा जीवन सार्थक व सफल होगा। हमारी यह पृथिवी देवों की धरा व धाम में परिणत हो सकेगी। मृतक श्राद्ध व जड़ पूजा जैसे अवैदिक कृत्यों से मुक्ति मिलेगी और देश व समाज उन्नति को प्राप्त होंगे। ओ३म् शम्।

ऋषि दयानन्द द्वारा हिन्दी अपनाने से इसका देश देशान्तर में प्रचार हुआ

—मनमोहन कुमार आर्य

आज हम जिस हिन्दी भाषा का प्रयोग करते हैं उसका उद्भव एवं विकास विगत लगभग दो सौ वर्षों में उत्तरोत्तर हुआ दृष्टिगोचर होता है। ऋषि दयानन्द (1825–1883) के काल में हिन्दी की उन्नति हो रही थी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी को हिन्दी की उन्नति करने वाले पुरुषों में प्रमुख स्थान प्राप्त है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ऋषि दयानन्द के समकालीन थे। वह अल्पायु में ही मृत्यु को प्राप्त हो गये। उनके बाद हिन्दी को साहित्यिक रूप देने व उसे समृद्ध करने के लिये अनेक कवियों, लेखकों व नाटक आदि की रचना करने वाले हिन्दी के विद्वानों का जन्म हुआ। ऋषि दयानन्द ने भारतेन्दु जी के बाल्यकाल में ही अपना हिन्दी भाषा का सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ लिखकर प्रचारित किया था जिसका प्रचार देश के अनेक भागों में हुआ और इसी ग्रन्थ के कारण लोगों को हिन्दू समाज के अन्धविश्वासों व कुरीतियों का दिग्दर्शन हुआ था। विलुप्त वैदिक धर्म एवं संस्कृति का अनावरण भी ऋषि दयानन्द के उपदेशों एवं उनके सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कार विधि, आर्याभिविनय आदि अनेक ग्रन्थों से हुआ था।

ऋषि दयानन्द के समय में धर्माचायों को विद्या व अविद्या का भेद विदित नहीं था। सभी अपनी अविद्या को विद्या व ज्ञान मानकर अभिमान करते थे और अपने मत को उत्तम और दूसरे मतों को हेय मानते थे। ऋषि दयानन्द ने अपने जीवन में सत्य एवं असत्य सिद्धान्तों की खोज की थी और असत्य मान्यताओं व सिद्धान्तों की समीक्षा कर तर्क एवं युक्तियों से खण्डन कर उनका प्रचार किया। उनका मानना था कि सत्य ही मनुष्य व मनुष्य जाति की उन्नति का कारण व आधार होता है। बिना सत्य के ग्रहण किये और असत्य का त्याग किये मनुष्य जाति की उन्नति नहीं हो सकती। यह सत्य सिद्धान्त इस सृष्टि में अनादि काल से प्रवृत्त है और अनन्त काल तक रहेगा। आश्चर्य है कि इस सिद्धान्त का विज्ञान में तो उपयोग किया जाता है, सैद्धान्तिक रूप में भी किया जाता है, परन्तु मत–मतान्तर अपने अपने व्यवहारों में इसका पूर्णतः पालन नहीं करते। एक मत दूसरे मत को प्रायः हेय मानता तथा स्वमत का ही बिना सत्यासत्य का विचार किये पोषण करता है। इसी कारण से संसार में अनेक मत–मतान्तर हैं जो देश व समाज की उन्नति में साधक कम तथा बाधक अधिक हैं। देश, समाज तथा व्यक्ति–व्यक्ति की उन्नति के लिए सत्य की प्रतिष्ठा एवं असत्य का त्याग किया जाना आवश्यक है। इसी सिद्धान्त को ऋषि दयानन्द ने देश व समाज के सम्मुख प्रस्तुत कर प्रचार किया था और इसके लिये उन दिनों सबसे अधिक जानी व समझी जाने वाली भाषा, जिसे वह आर्यभाषा कहते थे, जो वस्तुतः संस्कृतनिष्ठ शब्दों से युक्त वर्तमान हिन्दी के नाम से जानी जाने वाली भाषा है, प्रयोग में लाकर देश देशान्तर में प्रचार कर इसकी उन्नति में योगदान किया था। आज हिन्दी का जो उन्नत व प्रभावशाली स्वरूप तथा इसका सर्वत्र प्रचार व स्वीकारोक्ति हम देखते हैं, उसमें सर्वाधिक योगदान यदि किसी व्यक्ति व संस्था का है तो वह ऋषि दयानन्द और उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज का है।

ऋषि दयानन्द गुजरात के टंकारा ग्राम में जन्मे थे और वहीं पले व बढ़े थे, अतः वह जन्मना एवं कर्मणा गुजराती थे और उनकी मातृभाषा भी गुजराती थी। उनका अध्ययन संस्कृत भाषा का संस्कृत माध्यम से ही गुजरात सहित देश के अनेक भागों में अनेक विद्वानों सहित मुख्यतः मथुरा में गुरु विरजानन्द सरस्वती जी से हुआ था। संस्कृत भाषा में ही वह दूसरों से वार्तालाप किया करते थे। हिन्दी भाषा साहित्य व हिन्दी में बोलचाल का उनको ज्ञान

नहीं था। उन्हें एक बंगाली सज्जन श्री केशव चन्द्र सेन ने हिन्दी को अपनाने की प्रेरणा की थी। ऋषि दयानन्द ने गुजराती का न तो स्वयं प्रयोग किया और न ही दूसरों से करने का कभी आग्रह ही किया। उन्होंने संस्कृत को हिन्दी पर वरीयता भी नहीं दी। उन्होंने स्वयं हिन्दी को अपनाया और इसी भाषा में अध्यात्म व मनुष्य जीवन से संबंधित उपयोगी प्रत्येक विषय पर हिन्दी भाषा में अपने विश्व प्रसिद्ध धर्म व आचार–विचार के ग्रन्थ की रचना की। ऋषि दयानन्द से पूर्व किसी अन्य महापुरुष के जीवन में ऐसा उदाहरण दृष्टिगोचर नहीं होता। अतः ऋषि का यह कार्य अप्रतिम एवं प्रेरणादायक होने सहित प्रशंसनीय एवं अपूर्व है।

सत्यार्थप्रकाश ऋषि दयानन्द जी की आर्य हिन्दी भाषा में रची गयी अमर रचना है। इससे पूर्व किसी मत, पंथ व सम्प्रदाय ने अपने ग्रन्थों की रचना हिन्दी में नहीं की। ऋषि दयानन्द को अपने कलकत्ता प्रवास में ब्रह्म समाज के नेता श्री केशवचन्द्र सेन जी से हिन्दी को अपनाने का सुझाव मिला था। इसका कारण था कि ऋषि दयानन्द इससे पूर्व संस्कृत में ही व्याख्यान देते व बोलचाल में भी संस्कृत का ही प्रयोग करते थे। उनकी संस्कृत भाषा को सामान्य जन समझ नहीं पाते थे जिससे धर्म प्रचार में एक अवरोध की स्थिति थी। ऋषि दयानन्द को अपने विचारों के अनुवाद के लिये दूभाषियों की सेवायें लेनी पड़ती थी जो ऋषि दयानन्द का पूरा आशय जनता को बताने में असमर्थ रहते थे और कुछ चालाक व विरोधी विचारों के लोग उनके आशय के विरुद्ध भी लोगों को बताया करते थे। इस दृष्टि से धर्म प्रचार को प्रभावशाली बनाने के लिये देश की जन–जन की भाषा को अपनाना आवश्यक था। ऋषि दयानन्द ने हिन्दी के महत्व को समझ कर श्री केशवचन्द्र सेन जी के प्रस्ताव को तत्काल ही स्वीकार कर लिया था और तभी से उन्होंने हिन्दी भाषा में व्याख्यान देना आरम्भ कर दिया जिसमें समय के साथ सुधार होता गया। इसी कारण उन्होंने सन् 1874 में अपने प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश की रचना भी हिन्दी भाषा में की थी। इसके 9 वर्ष बाद जब उनकी हिन्दी काफी परिमार्जित व परिष्कृत हो गई थी, तो उन्होंने इस ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश का नवीन संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण भी निकाला था। यह दोनों ही संस्करण अत्यन्त उपयोगी हैं जिसे पढ़कर न केवल पाठक हिन्दी का जानकार वा विद्वान बन जाता है अपितु उसके भाषा विषयक ज्ञान में भी सुधार होता है जिससे वह संस्कृत निष्ठ हिन्दी शब्दों का प्रयोग कर हिन्दी के परिमार्जित एवं शुद्ध रूप में व्यवहार कर इसके प्रचार व प्रसार में सहयोग करता है। सत्यार्थप्रकाश को इस बात का भी गौरव है कि विश्व का बहुचर्चित एवं वैदिक धर्मी अनुयायियों का वेदों के बाद सुप्रतिष्ठित धर्मग्रन्थ ''सत्यार्थप्रकाश'' लोक भाषा हिन्दी में है। सत्यार्थप्रकाश से वेद, उपनिषद, दर्शन तथा मनुस्मृति के अनेक मन्त्रों, श्लोकों व संस्कृत वचनों के हिन्दी अर्थ पहली बार प्रकाश में आये। इससे लोगों में वेद, उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति, रामायण एवं महाभारत आदि ग्रन्थों के अध्ययन की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई थी। वैदिक आर्य विद्वानों ने इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये इन सभी शास्त्रीय व इतिहास के ग्रन्थों के श्लोकों के हिन्दी अर्थों के साथ संस्करण निकाले जिससे हिन्दी का देश भर में प्रचार हुआ। यदि ऋषि दयानन्द न आये होते और उन्होंने सत्यार्थप्रकाश को हिन्दी में न लिखा होता व हिन्दी को अपनाने का आन्दोलन न चलाया होता, तो आज हम हिन्दी की जिस सन्तोषजनक अवस्था को देख रहे हैं, वह कदापि न होती। हिन्दी का प्रचार, प्रसार तथा प्रभाव बढ़ाने में यदि किसी संस्था व मत ने सर्वाधिक योगदान दिया है तो वह देश का आर्यसमाज संगठन ही है।

हिन्दी के प्रचार प्रसार में आर्यसमाज द्वारा अपनी स्थापना वर्ष 1875 से ही देश के अनेक भागों में निकाली गई पत्र–पत्रिकाओं का भी योगदान है। पंजाब में उर्दू का अत्यधिक प्रभाव था। हिन्दी पाठक नगण्य होते थे। ऐसे समय में भी आर्यसमाज के प्रमुख नेता व विद्वान स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपने उर्दू पत्र ''सद्धर्म प्रचारक'' को हिन्दी में प्रकाशित कर एक बड़ा निर्णय लिया था जिससे पंजाब में हिन्दी प्रचार में प्रशंसनीय लाभ हुआ। लाहौर से श्री खुशहालचन्द खुर्सन्द जी का उर्दू मिलाप निकलता

था। हिन्दी समाचार पत्र की वहां कोई सम्भावना नहीं थी। ऐसी स्थिति में भी श्री खुशहालचन्द खुर्शन्द, जो बाद में महात्मा आनन्द स्वामी जी के नाम से प्रसिद्ध हुए, के सुपुत्र महाशय यश जी ने लाहौर से दैनिक हिन्दी मिलाप पत्र का प्रकाशन कर हिन्दी के प्रचार प्रसार में महनीय योगदान किया। इसी प्रकार आर्य समाज के अनेक विद्वानों ने देश के अनेक भागों में ऋषि दयानन्द के हिन्दी प्रेम व आग्रह को सामने रखकर हिन्दी पत्र–पत्रिकाओं का सम्पादन किया जिससे हिन्दी का देश भर में प्रचार हुआ। आर्यसमाज के सभी विद्वान देश भर में प्रचार के लिये जाते थे। दक्षिण भारत के कुछ भागों में भी आर्य समाज के विद्वानों ने प्रचार किया। सभी विद्वान हिन्दी भाषा में ही प्रचार करते व व्याख्यान देते थे। आर्यसमाज का प्रायः समस्त साहित्य हिन्दी भाषा में ही है। इस कारण भी देश में हिन्दी का प्रचार प्रसार हुआ। आर्य समाज ने देश को अनेक हिन्दी सेवी विद्वान, लेखक, कवि, वेदभाष्यकार, अनुवादक व सम्पादक आदि दिये। इन सबने हिन्दी के प्रचार प्रसार में योगदान किया है।

सन् 1882 में ब्रिटिश सरकार ने डा. हण्टर की अध्यक्षता में एक कमीशन की स्थापना कर उससे राजकार्यों के लिए उपयुक्त भाषा की सिफारिश करने को कहा था। यह आयोग हण्टर कमीशन के नाम से जाना गया। यद्यपि उन दिनों सरकारी कामकाज में उर्दू–फारसी एवं अंग्रेजी भाषाओं का प्रयोग ही होता था, परन्तु स्वामी दयानन्द जी के सन् 1872 से 1882 तक व्याख्यानों, ग्रन्थ–लेखन, शास्त्रार्थों आदि के प्रचार एवं इसके अनुयायियों की हिन्दी सेवा व निष्ठा से हिन्दी भाषा भी सर्वत्र लोकप्रिय हो गई थी। इस हण्टर कमीशन के माध्यम से हिन्दी को राजभाषा का स्थान दिलाने के लिये स्वामी दयानन्द जी ने देश की सभी आर्य समाजों को पत्र लिखकर बड़ी संख्या में हस्ताक्षर युक्त ज्ञापन हण्टर कमीशन को भेजने की प्रेरणा की और जहां से ज्ञापन नहीं भेजे गये थे, उन्हें स्मरण पत्र भेजकर शीघ्र ज्ञापन भेजने के लिए सावधान किया। आर्यसमाज फर्रुखाबाद के स्तम्भ बाबू दुर्गादास को भेजे पत्र में स्वामी जी ने लिखा था – ''यह काम एक के करने का नहीं है और अवसर चूके वह अवसर आना दुर्लभ है। जो यह कार्य सिद्ध हुआ (हो गया अर्थात् हिन्दी राजभाषा बना दी गई) तो आशा है कि मुख्य सुधार की नींव पड़ जायेगी।'' स्वामी जी की प्रेरणा के परिणामस्वरूप देश के कोने–कोने से आयोग को आर्यसमाजों ने बड़ी संख्या में लोगों के हस्ताक्षर कराकर ज्ञापन भेजे। कानपुर से हण्टर कमीशन को दो सौ मैमोरियल भेजे गए, जिन पर दो लाख लोगों ने हिन्दी को राजभाषा बनाने के पक्ष में हस्ताक्षर किए थे। हिन्दी को गौरव प्रदान करने के लिए स्वामी दयानन्द जी द्वारा किया गया यह कार्य इतिहास की एक अन्यतम घटना है।

स्वामी दयानन्द जी की प्रेरणा से जिन प्रमुख लोगों ने हिन्दी भाषा सीखी उनमें जहां अनेक रियासतों के राज–परिवार के सदस्य हैं, वहीं कर्नल एच.ओ. अल्काट भी हैं जो अमेरिका में स्वामी जी की प्रशंसा सुनकर उनके दर्शन करने भारत आये थे और भारत में स्वामी दयानन्द जी ने उनका आतिथ्य किया था। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि शाहपुरा, उदयपुर, जोधपुर आदि अनेक स्वतन्त्र रियासतों के महाराजा स्वामी दयानन्द जी के अनुयायी थे और स्वामी जी की प्रेरणा से ही उन्होंने अपनी–अपनी रियासतों में हिन्दी को राजभाषा का स्थान दिया था।

स्वामी दयानन्द जी संस्कृत व हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं का भी आदर करते थे। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है––''जब पुत्र–पुत्रियों की आयु पांच वर्ष हो जाये तो उन्हें देवनागरी अक्षरों का अभ्यास करायें, अन्यदेशीय भाषाओं के अक्षरों का भी।'' स्वामी जी अन्य प्रादेशिक भाषाओं को हिन्दी व संस्कृत की भांति देवनागरी लिपि में लिखे जाने के समर्थक थे जो राष्ट्रीय एकता की पूरक होती। अपने जीवन काल में हिन्दी पत्रकारिता को भी आपने नई दिशा दी। आर्य दर्पण, आर्य प्रकाश आदि अनेक हिन्दी पत्र आपकी प्रेरणा से प्रकाशित हुए एवं इनकी संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई।

स्वामी दयानन्द जी ने अपने समकालीन लोगों से हिन्दी में जो पत्र–व्यवहार किया है, वह भी

समकालीन किसी एक व्यक्ति द्वारा किए गए पत्र–व्यवहार में सर्वाधिक है। स्वामी दयानन्द जी पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने अपनी आत्मकथा हिन्दी में लिखकर भावी आत्मकथा लेखकों का मार्ग प्रशस्त किया। सृष्टि के आरम्भ में वेदों की उत्पत्ति से स्वामी दयानन्द जी के समय तक वेदों का संस्कृत भाषा में ही लेखन व भाष्य होता था। स्वामी दयानंद जी पहले व्यक्ति थे जिन्होंने वेदों का हिन्दी भाषा में भाष्य कर आम लोगों का धर्मशास्त्रों में प्रवेश कराया। स्वामी दयानन्द जी सहित आर्यसमाज एवं उनके अनुयायियों द्वारा स्थापित गुरुकुल एवं डी.ए.वी. स्कूल व कालेजों द्वारा भी हिन्दी के प्रचार–प्रसार में उल्लेखनीय कार्य किया है। गुरुकुल कांगड़ी में देश में सर्वप्रथम विज्ञान व गणित सहित सभी विषयों की पुस्तकें हिन्दी माध्यम से तैयार कर उनका सफलतापूर्वक अध्यापन किया गया। मुस्लिम मत की धर्मपुस्तक कुरआन का हिन्दी में अनुवाद कराने का श्रेय भी स्वामी दयानन्द जी को है। इसी के आधार पर उन्होंने इस मत की मान्यताओं की परीक्षा की व उसे अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में प्रस्तुत किया है।

अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में स्वामी दयानन्द जी ने लिखा है कि जो मनुष्य जिस देशभाषा को पढ़ता है उसको उसी भाषा का संस्कार होता है। अंग्रेजी व अन्यदेशीय भाषाओं का पढ़ा हुआ व्यक्ति आचार व विचारों की दृष्टि से प्राचीन भारतीय वैदिक संस्कृति से सर्वथा दूर देखा जाता है। अतः स्वामी जी का यह निष्कर्ष उचित ही है। संस्कृत व हिन्दी के अध्ययन, अध्यापन व व्यवहार से ही सनातन वैदिक धर्म एवं संस्कृति की रक्षा सम्भव है।

थियोसोफिकल सोसायटी की नेत्री मैडम बेलेवेटेस्की ने स्वामी दयानन्द जी से उनके ग्रन्थों के अंग्रेजी अनुवाद की अनुमति मांगी थी। तब स्वामी दयानन्द जी ने उन्हें 31 जुलाई, 1876 को विस्तृत पत्र लिखकर अनुवाद की अनुमति देने से हिन्दी के प्रचार व प्रसार एवं हिन्दी की प्रगति में आने वाली बाधाओं से परिचित कराया था। स्वामी दयानन्द जी ने उन्हें लिखा था कि अंग्रेजी अनुवाद सुलभ होने पर देश–विदेश में जो लोग उनके ग्रन्थों को समझने के लिए संस्कृत व हिन्दी का अध्ययन कर रहे हैं, वह समाप्त हो जायेगा।

हरिद्वार में एक बार व्याख्यान देते समय एक श्रोता द्वारा स्वामी दयानन्द जी से उनकी पुस्तकों का उर्दू में अनुवाद कराने की प्रार्थना करने पर श्रोताओं को सम्बोधित कर उन्होंने कहा था – 'आप तो मुझे अनुवाद की सम्मति देते हैं, परन्तु दयानन्द के नेत्र वह दिन देखना चाहते हैं कि जब कश्मीर से कन्याकुमारी और अटक से कटक तक देवनागरी अक्षरों का प्रचार होगा।' स्वामी जी ने एक स्थान पर यह भी कहा है कि जो व्यक्ति इस देश का अन्न खाता, यहां निवास करता है तथा जो इस देश की वायु का सेवन व जल का ग्रहण करता है, यदि वह इस देश की संस्कृत व हिन्दी भाषा को नहीं सीखता, तो उससे क्या आशा की जा सकती है? सभी व्यक्तियों को इन भावों पर विचार करना चाहिये।

स्वामी दयानन्द तथा उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज ने आर्यभाषा हिन्दी की अनन्य प्रशंसनीय सेवा की है। हिन्दी को अध्यात्म सहित राजकार्य, आधुनिक साहित्य एवं संप्रेषण की भाषा बनाने में आर्यसमाज का सर्वोपरि योगदान है। एक षड्यन्त्र के अन्तर्गत स्वामी जो विष देकर व उनके उपचार में असावधानी होने से 58–59 वर्ष की अवस्था में उनका देहावसान हो गया था। यदि वह कुछ अधिक समय तक जीवित रहते तो अपने व्याख्यानों, शास्त्राओं तथा ग्रन्थों के द्वारा हिन्दी को न केवल समृद्ध करते अपितु देश देशान्तर में हिन्दी का अधिकाधिक प्रचार भी करते। 14 सितम्बर, 2020 को हिन्दी दिवस को ध्यान में रखकर हमने इस लेख में ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के हिन्दी के प्रचार व प्रसार में योगदान की चर्चा की है। आशा है पाठक इससे लाभान्वित होंगे। ओ३म् शम्।

हनुमान जी की नीतिमत्ता

–ईश्वरी प्रसाद प्रेम

श्री राम ने सर्वथा निश्चिन्त भाव से सुग्रीव को युद्ध के लिए प्रस्थान करने की अनुमति दी। सम्पूर्ण सैन्य दल जय घोषों से आकाश गुँजाता समुद्र तट पर आ पहुंचा। श्री राम, लक्ष्मण, सुग्रीव एवं हनुमान आदि के सहित समुद्र तरने के उपायों पर विचार कर ही रहे थे कि उन्हें रावण–भ्राता विभीषण के शरण में आने का सन्देश मिला। इस प्रसंग को लेकर सुग्रीव तथा अन्य सभासदों ने विभीषण के सम्बन्ध में अनेक सन्देह युक्त विचार प्रकट करते हुए उसे न अपनाने का प्रस्ताव किया। तब श्रीराम की आज्ञा से नीति–धुरीण संस्कार–सम्पन्न हनुमान् (जो स्वयं ही सीता–खोज के समय लंका में फूट की आग लगाकर आये थे) बोले–राघवेन्द्र! मैं आपके सामने कहने के तो योग्य नहीं, परन्तु मंत्री वर्ग की कही एक दो बातों के विषय में कुछ कहना चाहता हूँ। वह यह कि एक बार हो किसी पर–दल से आये हुए पुरुष के विरूद्ध कोई दोषारोपण करना उचित नहीं है, जो बातें इनके विषय में कही जाती है, उनका कोई स्थान ही नहीं है। सबसे बड़ी शंका कि विभीषण का राम की शरण में आने का यह कोई देश और काल नहीं, वह ठीक नहीं है, क्योंकि एक दुःखी पुरुष के लिये देश–काल का कोई विचार नहीं होता।

दौरात्म्यं रावणे दृष्ट्वा विक्रमंच तथा त्ययि।
युक्तमागमनं ह्यत्र सदृशं तस्य बुद्धितः।
अज्ञातरूपः पुरुषैः स राजन् पृच्छयतामिति।।
अशक्यं सहसा राजन् भावो बोद्धुं परस्य व।
अंतरेण स्वरर्भिन्ननैपुण्यं पश्याँ भृशम्।
न त्वस्य ब्रुवतो जातु लभ्यते दुष्टभावता।।
प्रसन्नं वदनं चापि तस्मान्मे नास्ति संशयः।
उद्योगं तव संप्रेक्ष्य मिथ्यावृत्त च रावणम्।।
बलिनं च हतं श्रुत्वा सुग्रीवं चाभिषेचितम्।
राज्यं प्रार्थयमानस्तु बुद्धिपूर्व मिहागतः।।

''रावण की सीता हरण रूपी दुरात्मा और आपके बाली–वध आदि विक्रम को देखकर यह आपकी शरण में आया है अतएव यह उसकी बुद्धि का उत्तम प्रमाण है।''

यदि आपको विशेष जानना है, तो आप अनजाने पुरूषों से उसका भेद लें क्योंकि बातचीत से भाव प्रकट हो जाते हैं। चाहे कोई कितना ही विद्वान् हो पर उसकी शक्ति से बाहर है कि वह बुद्धिमान् के समाने अपने भावों तथा अपने अन्दर के विचारों को प्रकट न होने दे, और बातचीत करता रहे। श्रीमान्! इसके बोलते हुए इसकी वाणी से किंचित भी दुष्टता प्रतीत नहीं होती और इसका मुख प्रसन्न है इसलिए मुझे तो इस पर कोई सन्देह नहीं है। इसके आचार, व्यवहार सरल व स्पष्ट हैं इसलिए मेरा भी यह मत है कि आपके उद्योग, रावण के पापाचार, बलि का वध, सुग्रीव का अभिषेक आदि सुनकर राज्य प्राप्ति के विचार से यह आपकी शरण में आया है।''

हनुमान् की सम्मति सुनकर प्रसन्न हुए राम बोले–''मुझे भी कुछ कहना है। आप लोग कृपा कर सुनें, वह यह है कि–

मित्रभावेन सम्प्राप्तं न त्यजेयं कथंचन।
दोषो यद्यपि तस्मिन् स्यात्सतामेताद्विर्गाहतम्।।

''मित्र भाव से आये हुए को मैं कभी नहीं त्याग सकता। यद्यपि इसमें नैतिक दोष हों, पर सत्पुरुषों के लिये बड़ी निन्दा का स्थान है कि वे शरण आये मित्र को ग्रहण न करें।

युद्ध भूमि में

नल और नील जैसे कुशल इन्जीनियरों तथा प्राणों पर खेलने वाले महा पराक्रमी वानर–वीरों के साहस और सहयोग से तथा सागर नामक वृद्ध एवं

अनुभवी महात्मा के मार्ग दर्शन में समुद्र पर सेतु बाँध राम–दल ने लंका में प्रवेश किया। युवराज अंगद को एक बार पुनः रावण को कर्त्तव्य बोध कराने के लिये भेजा गया। महावीर हनुमान के पूर्व पराक्रम से चिन्ताग्नि में दग्ध हो रहे लंका के नर–नारी अंगद को भी हनुमान समझ ''हनुमान् फिर आ गया, महावीर फिर आ गया। ऐसा उच्चालाप कर भयावह हो इधर–उधर भागने लगे।

अंगद के सिखावन को भौतिक ऐश्वर्यों के मद मे डूबा रावण कहाँ और क्यों मानता? अन्ततः एकान्त भोगवादी राक्षसी सभ्यता का सर्वनाशकारी महा–युद्ध हुआ।

वाल्मीकीय रामायण के युद्ध काण्ड में श्री हनुमान् जी के प्रभाव का बड़ा सुन्दर वर्णन है, यहाँ उसका दिग्दर्शन मात्र कराया जाता है।

एक दिन भयानक युद्ध में रावण के प्रधान–प्रधान सेनापति खेत रहे, राक्षस लोग हताश हो गये, पुत्र और भाइयों के मारे जाने का समाचार सुनकर रावण को बड़ी चिन्ता हुई। यह देखकर मेघनाद को बड़ा क्रोध आया। वह पिता के सामने अपने बल–पौरुष का वर्णन करके उसे धैर्य देकर भयानक युद्ध करने के लिए युद्ध क्षेत्र में आया। वहाँ पहुँचकर उसने बड़ा घमासान युद्ध किया तथा बहुत से वानरों को प्राणहीन कर दिया। उसके ब्रह्मास्त्र के प्रभाव से श्रीराम और लक्ष्मण भी मुर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। बचे हुए प्रधान–प्रधान रीछ और वानर चिन्तामग्न हो गये। तब विभीषण ने सबको धैर्य दिया और वे हनुमान् को साथ लेकर जहाँ जाम्बवान् पड़ा था, वहाँ गये। वहाँ जाकर विभीषण ने जाम्बवान् का हाल पूछा, तब जाम्बवान् अपनी पीड़ा का वर्णन करते हुए कहने लगे कि मैं तुम्हें केवल आवाज से ही पहचान सका हूँ, देखने की शक्ति मुझमें नहीं है। तुम सबसे पहले मुझे यह बताओ कि वानर श्रेष्ठ हनुमान् के प्राण बचे हैं या नहीं। इस पर विभीषण ने कहा–''ऋक्षराज! आपने श्रीराम और लक्ष्मण को छोड़कर पहले केवल हनुमानजी की कुशल कैसे पूछी? राजा सुग्रीव, अंगद तथा श्री राम और लक्ष्मण पर भी आपने उतना स्नेह प्रकट नहीं किया जितना प्रगाढ़ प्रेम आपका पवनकुमार के प्रति लक्षित हो रहा है। इसका क्या कारण है?

तब जाम्बवान् बोले–

श्रृणु नैऋतशार्दुल यस्मात्पृच्छामि मारुतिम्।
अस्मिन्जीवति वीरे तु हतमप्यहतं बलम्।
हनुमत्युज्झितप्राणे जीवप्तोपि मृता वयम्।।
(युद्ध0 ७४।११–२२)

''राक्षसराज! सुनो, मैं हनुमान् के लिए इसलिए पूछ रहा हूँ कि यदि इस समय वीरवर हनुमान् जीवित हों तो यह मरी हुई सेना भी जी सकती है और यदि उनके प्राण निकल गये हों तो हम जीते हुए भी मृतक तुल्य ही हैं।

उसके बाद श्री हनुमान् जी ने उनको प्रणाम किया। हनुमान् की आवाज सुनकर जाम्बवान् में जैसे नया जीवन आ गया।

जब हनुमान संजीवनी लाये

पश्चात् जाम्बवान्, विभीषण, हनुमान और कतिपय वानरों के साथ वानर–सेना तथा श्री राम–लक्ष्मण की मूर्छा दूर करने का उपाय सोचने लगे।

अपनी–अपनी बारी से सम्मति देते हुए विभीषण ने कहा–

विशल्यौ कुरु चाप्येतौ सदितौ राम लक्ष्मणौ।
हिमवंतं नगश्रेष्ठं हनूमन्! गन्तुमर्हसि।।
सवौषधियुतं वीर! द्रक्ष्यस्योषधिपर्वतम्।
मृतसंजीवनीं चैव विशल्यकरणीमपि।।
सुवर्णकरणीं चैव सन्धानीं च महौषधीम्।
ताः सर्वां हनुमन्! गृह्य क्षिप्रमागन्तुमर्हसि।
आश्वासय हरीन्प्राणैर्योज्य गन्धवहात्मज।।

ऋषभ तथा हिमवान् पर्वत पर बहुत सी उपयोगी औषधियाँ हैं, उनमें से मृत संजीवनी (मूर्छितों को सचेत करने वाली) + विशल्यकरणी (शस्त्र–अस्त्र आदि के विष को निकालने वाली) + सुवर्णकरणी (रोगी पुरुषों की देह को सुवर्ण समान उज्जवल करने वाली) सन्धानी (कटे हुए अंग हड्डी अथवा शिर, धड़ को जोड़ देने वाली) औषधि है। इन

सबको वीर हनुमान् जानते हैं और यही शीघ्र ला भी सकते हैं। अतः इनसे ही उनको लाने की प्रार्थना करनी चाहिये तथा उन औषधियों से वानरों की मूर्छा, शस्त्र–विष और अस्थिभंग आदि दूर करना चाहिए। विभीषण का वचन सुनकर जाम्बवान् आदि वृद्धों ने हनुमान् को औषधि लाने के लिए कहा।

जाम्बवान् आदि की आज्ञा मानकर विद्वान् हनुमान् विमान द्वारा उस पर्वत पर गए और वहाँ से वे औषधियें लेकर शीघ्र ही वानर सेना में आ गये जिसे देख सब लोग बड़े प्रसन्न हुए। हनुमान् ने सबको यथायोग्य प्रणाम किया और उनसे आशीर्वादादि प्राप्त किया। तदनन्तर वह औषधियें राम–लक्ष्मण और अन्यान्य वानरों को सुँघाई तथा लगाई गई। तो झट–पट राम–लक्ष्मण तथा अन्य सब वानर वीर सचेत और नीरोग हो गये तथा अनेकों वानर तो तभी युद्ध के लिए भी तैयार हो गये।

हनुमान द्वारा इन्द्रजित् को धिक्कार

इस युद्ध में जब राक्षसों के बड़े–बड़े योधा मारे गये, तब रावण के पुत्र इन्द्रजित् ने शत्रु–दल को निरुत्साहित करने के लिए एक राक्षसी माया रची। एक माया की सीता बनाकर वह रणभूमि में ले आया और वानर–वीर हनुमान के सामने वध करने लगा, उसका तात्पर्य यह था कि हनुमान और राम आदि सब पीछे हट जायें कि अब सब युद्ध व्यर्थ है, क्योंकि जिसके लिए युद्ध था वह सीता ही नष्ट हो गई है। हुआ भी ऐसा ही। जब वह सीता को केशों से पकड़ कर रण–क्षेत्र में लेकर आया तब हनुमान् बोले–''हे अनार्य दुर्वृत्त! धिक्कार है तुझको जो निरपराध, विपद्ग्रस्त, गृह, राज्य तथा पतिहस्त से वियुक्त सीता देवी को निर्दय होकर मारना चाहता है। अरे नीच! क्या तुझे इस घृणा के योग्य कर्म से घृणा नहीं होती। पापी! स्मरण रख कि यदि तू इस कर्म से न हटेगा तो शीघ्र ही तेरा नाश होगा।

परन्तु यह सब कुछ न सुनते हुए राक्षस ने यह कहकर कि ''हनुमान्! सुग्रीव–राम और तुम जिसके लिए आये हो उस सीता को आज तुम्हारे सामने वध करता हूँ।'' तीक्ष्ण खड्ग से यज्ञोपवीत मार्ग अर्थात् हृदय के स्थान से माया (वैज्ञानिक कौशल) की बनी सीता को काट डाला जिसे देख व सुन कर राक्षस–दल में हर्षनाद और वानर दल में शोक छा गया। किन्तु शीघ्र ही विभीषण द्वारा रहस्योद्घाटन किये जाने पर सभी को बड़ा सन्तोष हुआ।

आर्यसमाज शक्तिनगर, अमृतसर द्वारा संगीत प्रतियोगिता का सफल आयोजन

आर्यसमाज, शक्ति–नगर, अमृतसर के तत्वावधान मे रविवार 30–8–2020 की सांय एक आनलाइन भजन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमे अलग–अलग स्थानों से 19 प्रतियोगियों ने भाग लिया। सभी प्रतियोगियों ने वेद, आर्यसमाज, ऋषि दयानन्द एवं देश के महान सपूतों के प्रति भजन गाये और सब श्रोताओं को भक्ति रस मे डूबो कर भावविभोर कर दिया। इस कार्यक्रम के तीन निर्णायक प्रो. कुलदीप आर्य, प्रमुख, संस्कृत विभाग, डी.ए.वी कालेज, अमृतसर, 2– बहिन सुनीता भाटिया जी, रिटायर्ड अध्यापिका, एस.एल. भवन्स स्कूल, अमृतसर, 3– श्री सोनी आर्य, वैदिक भजनोपदेशक एवं संगीत विशेषयज्ञ, अमृतसर ने बड़ी सुन्दरता से अपने कर्तव्य को पूरा किया।

प्रतियोगिता में पहले तीन स्थान प्राप्त करने वाले प्रतियोगी है, प्रथम बहिन इन्दिरा अरोड़ा (गाजयिबाद), द्वितीय बहिन सुरति (गाजियाबाद), श्री सौरव तलवाड (अमृतसर) एवं बहिन रेणू घई (अमृतसर) तथा तृतीय बहिन रंजू जी (अमृतसर)। इस प्रतियोगिता के आयोजन में आर्यसमाज, शक्तिनगर, अमृतसर के उपमंत्री ऋषिभक्त श्री मुकेश आनन्द का मुख्य योगदान रहा।

वेदों में स्वस्थ–जीवन के मौलिक सूत्र

–डॉ0 भवानीलाल भारतीय

मानव जीवन का लक्ष्य है, पुरुषार्थचतुष्टय की प्राप्ति। धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी चतुर्विध पुरुषार्थ की प्राप्ति में आरोग्य की महत्वपर्ण भूमिका है। कहा भी गया है–

धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्य मुलमुत्तमम्। (च0सू0 १।१५)

वैदिक संहिताओं में मानव को स्वस्थ तथा नीरोग रहने की बार–बार प्रेरणा दी गयी है। वस्तुतः वेद मानव के हित की विधाओं तथा विज्ञानों का भण्ड़ार है, भगवान् मनु के अनुसार वेद पितर, देव तथा मनुष्यों के मार्गदर्शन के लिये सनातन चक्षुओं के तुल्य हैं, जिनसे लोग अपने हित और अहित को पहचानकर कर्तव्याकर्तव्य का निर्धारण कर सकते हैं। मानव–स्वास्थ्य के लिये उपयोगी शरीर विज्ञान तथा स्वास्थ्य रक्षा का विशद निरूपण इस वाङ्मय में उपलब्ध है। वेदों की दृष्टि में यह शरीर न तो हेय है और न तिरस्कार के योग्य।

वेदों में मनुष्य के लिये दीर्घायु की कामना की गयी है, जो शरीर–नीरोग होने से सम्भव है। ''आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पताँ श्रोत्रं यज्ञेन कल्पताम् (यजु0 १।२१) आदि मन्त्रों में मनुष्य के दीर्घायु होने तथा स्वजीवन को लोकहित (यज्ञ) में लगाने की बात कही गयी है। यह तभी सम्भव है जब उसके चक्षु तथा श्रोत्र आदि इन्द्रियाँ और पंचप्राण पूर्ण स्वस्थ एवं बलयुक्त रहें। वेदों में ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों को बलिष्ठ, स्वस्थ तथा यशस्वी बनाने के लिये कहा गया है। ''प्राणश्च मेऽपानश्च मे'' (यजु0 १८।२) मन्त्र में प्राण, अपान तथा व्यान आदि को स्वस्थ रखने के साथ–साथ वाक्, मन, नेत्र तथा श्रोत्र आदि को भी बलयुक्त रखने की बात कही गयी है।

संध्योपासना के अन्तर्गत उपस्थान–मन्त्र में स्पष्ट कहा गया है कि उसके नेत्र, कान तथा वाणी आदि इतने बलवान् हों, जिनसे वह सौ वर्षपर्यन्त पदार्थों को देखता रहे, शब्दों को सुनता रहे, वचनों को बोलता रहे तथा स्वस्थ एवं सदाचारयुक्त–जीवन जीता रहे। केवल सौ वर्षपर्यन्त ही नहीं, उससे भी अधिक ''भूयश्च शरदः शतात्''। वैदिक उक्ति में शरीर को पत्थर की भाँति सुदृढ़ बनाने की बात कही गयी है–''अश्मा भवतु ते तनूः''।

आरोग्य लाभ के विविध साधनों तथा उपायों की चर्चा भी वेदों में आयी है। उषःकाल में सूर्योदय से पूर्व शय्यात्याग को स्वास्थ्य के लिये अतीव उपयोगी बताया गया है। इसलिये वेदों में उषा को दिव्य ज्योति प्रदान करनेवाली तथा सत्कर्मों में प्रेरित करने वाली देवी के रूप में चित्रित किया गया है। जब प्रातःकाल में संध्या के लिये बैठते हैं तो हम उपस्थान–मन्त्रों का उच्चारण करते हैं। उसी समय हमें पूर्व दिशा में भगवान् भास्कर उदित होते दिखायी देते हैं। इस पवित्र तथा स्फूर्तिदायिनी वेला में साधक एक ओर तो आकाश में उदित होने वाले मार्तण्ड को देखता है, दूसरी ओर वह अपने हृदयाकाश में प्रकाशयुक्त परमात्मा के दिव्य लोक का अनुभव कर कह उठता है–

उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्य्यमगन्म ज्येतिरूत्तमम्।। (यजु0 २०।२१)

अर्थात् अंधकार निवारण करने वाला यह ज्योतिःपुंज सूर्य प्राची दिशा में उदित हुआ है, यही देवों का देव परमात्मारूपी सूर्य मेरे मानस–क्षितिज पर प्रकट हुआ है और इससे निःसृत ज्ञानरश्मियों की ऊष्मा का मैं अपने अन्तःकरण में अनुभव कर रहा हूँ।

यो जागार तमृचः कामयन्ते (ऋ0 ५।४४।१४), ऋग्वेद की इस ऋचा में स्पष्ट कहा गया है कि जो जागता है, जल्दी उठकर प्रभु का स्मरण करता है,

ऋचाएँ उसकी कामना पूरी करती है। साम आदि अन्य वेदों का ज्ञान भी उषःकाल में उठकर स्वाध्याय में प्रवृत्त होनेवाले व्यक्ति के लिये ही सुलभ होता है। आलसी, प्रमादी, दीर्घसूत्री तथा देर तक सोते रहने वाले लोग सौभाग्य और आरोग्य से वंचित रहते हैं। जल्दी उठकर वायु सेवन के लिए भ्रमण करना चाहिए। इस सम्बन्ध में वेद का कहना है कि पर्वतों की उपत्यकाओं में तथा नदियों के संगमस्थल पर प्रकृति की छटा अवर्णनीय होती है। यहाँ विचरण करने वाले अपनी बुद्धियों का विकास करते है।

उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम्।
धिया विप्रो अजायत।। (ऋ0 ८।६।२८)

शरीर को स्वस्थ और निरोग रखने के लिये शुद्ध, पुष्टिदायक, रोगनाशक अन्न तथा जल का सेवन आवश्यक है। जल के विषय में वेद कहता है–''आपो दिष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे'' (यजु0 ११।५०)। भाव यह है कि जल हमें सुख प्रदान करने वाला तथा ऊर्जा प्रदान करने वाला हो।

अन्नविषयक अनेक मंत्र वेदों में आये हैं। जिन पुष्टिकारक व्रीहि, गोधूम, मुद्र आदि अन्नों का हम सेवन करें, उनकी गणना निम्न मन्त्र में की गयी है–''व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खल्वाश्च में...गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्'' (यजु० १८।१२)।

भोजन में गोदुग्ध का सेवन अत्यन्त आवश्यक है। वेदों में गोमहिमा के अनेक मन्त्र आये हैं। गाय की महत्ता का वर्णन करते हुए उसे रुद्रसंज्ञक ब्रह्मचारियों की माता, वसुओं की दुहिता तथा आदित्यसंज्ञक तेजस्वी पुरुषों की बहिन कहा गया है–''माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः'' (ऋ0 ८।१०१।१५)।

अथर्ववेद के मन्त्र में गायों को सम्बोधित कर कहा गया है कि आप कृश तथा दुर्बल व्यक्ति को पुष्ट और स्वस्थ बना देती हैं। उसके शरीर की सौन्दर्यवृद्धि का कारण आपका दुग्ध ही है। ''यूयं गावः'' आदि अथर्वमन्त्र इसके प्रमाण हैं। अन्न के विषय में वेद में कतिपय आवश्यक निर्देश मिलते हैं। प्रथम तो यह कहा गया है कि अन्नपति परमात्मा ही हैं। वे ही हमें रोगरहित तथा बलवर्द्धक अन्न प्रदान करते हैं। वे इतने उदार तथा समदर्शी हैं कि दो पैरोंवाले मनुष्यों तथा चौपाये जानवरों–सभी प्राणियों को अन्न प्रदान करते हैं–

अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः।
प्र प्रदातारं तारिष ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे।। (यजु0 ११।८३)

भोजन के विषय में एक अन्य प्रसिद्ध मन्त्र निम्न है–

मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत् स तस्य। नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी।। (ऋ0 १०।११७।६)

अर्थात् अकेला खानेवाला, अन्यों को भोजनादिसे वंचित रखनेवाला वास्तव में पाप ही खाता है। ऐसा स्वार्थी व्यक्ति न तो स्वयं को ही पोषित करता है और न अपने मित्रों को। भगवान् श्रीकृष्ण ने वेद की इसी उक्ति को इस प्रकार से बताया–

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।
भुंजते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्।। (गीता ३।१३)

जो पापी अपने लिये ही पकाते हैं, वे वस्तुतः पाप ही खाते हैं। आहार और अन्न की शुद्धता के अनेक निर्देश वेदाश्रित उपनिषदादि ग्रन्थों में भी मिलते हैं, वहाँ कहा गया है–

आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः सत्त्वशुद्धौ ध्रवा स्मृतिः।। (छा0 उ0 ७।२६।२)

अर्थात् सात्विक आहार–ग्रहण करने से मन की शुद्धि होती है और मन के शुद्ध होने पर अविचलित स्मृति प्राप्त होती है। उपनिषदों में ही अन्न की निन्दा न करने का उपदेश दिया गया है–''अन्नं न निन्द्यात् तद् व्रतम्''।

भोजन आदि की भाँति शान्त और स्थिर निद्रा भी आरोग्य के लिए आवश्यक है। ऋग्वेदीय रात्रिसूक्त (१०।१२७।२) में इसका सुन्दर विवेचन हुआ है। रात्रि में उचित समय पर सोना स्वास्थ्य के लिए जरूरी है। वेद में रात्रि को द्युलोक की पुत्री कहा गया है। यह रात्रि वस्तुतः उषःकाल में बदलकर अन्धकार का विनाश करती है– ''ज्योतिषा बाधते तमः'' (ऋ १०।१२७।२)।

मनुष्य का नीरोग और स्वस्थ रहना केवल शरीरक्षण से ही सम्भव नहीं है। इसी अभिप्राय से उपनिषद् पंचकोशों का उल्लेख करते हैं, जिनमें अन्नमय कोश, प्राणमय कोश तथा मनोमय कोश के बाद ही विज्ञानमय कोश और आनन्दमय कोश की चर्चा हुई है। स्वस्थ प्राणशक्ति आरोग्य का प्रमुख कारण बनती है। वेदों ने तो प्राणों को परमात्मा का ही वाचक माना है– ''प्राणाय नमो यस्य सर्वमिदं वशे'' (अथर्व0 ११।४।१)।

इसी अभिप्राय को भगवान् बादरायण ने अपने सूत्र ''अतएव प्राणः'' में कहा है। प्राण नाम से परमात्मा ही कथित हुए हैं।

आरोग्य का एक महत्त्वपूर्ण साधन है ब्रह्मचर्य। इसके पालन की महिमा के लिये अथर्ववेद का ब्रह्मचर्य–सूक्त द्रष्टव्य है। वहाँ स्पष्ट कहा गया है कि ब्रह्मचर्यरूपी तप के द्वारा विद्वान् देवगण मृत्यु पर विजय पा लेते हैं– ''ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघत'' (अथर्व0 ११।५।१६)।

अथर्ववेद में रोग, रोग के कारणों, उनके निवारण के उपायों, रोगनाशक औषधियों एवं वनस्पतियों तथा रोग दूर करनेवाले वैद्यों आदि की विस्तृत चर्चा मिलती है। ये सभी प्रकरण शारीरिक स्वास्थ्य से ही सम्बद्ध हैं। मनोवैज्ञानिक चिकित्सा के संकेत भी वेदों में मिलते हैं। ''यज्जाग्रतो दूरमुपैति दैवं0''(यजु0 ३४।१६) आदि मन्त्रों में मिलते हैं, जिसमें सहानुभूतिप्रवण वैद्य का कोमल स्पर्श रोगी के लिये औषधि का काम करता है।

श्रद्धांजलि

स्व0 श्री धर्मवीर त्यागी, जालन्धर

ऋषि दयानन्द भक्त एवं आर्य समाज के निष्ठावान अनुयायी, जालन्धर निवासी श्री धर्मवीर भाटिया जी का दिनांक 07.09.2020 को देहवसान हो गया। आपके सभी भाई–बहनों ने अपने देह दान किये हुए हैं। श्री सुशील भाटिया, चण्डीगढ़ आपके अनुज भ्राता हैं जो ऋषि जन्म भूमि न्यास, टंकारा तथा वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून को अपनी सेवाएं देते हैं। आपने समय–समय पर आश्रम को यथेष्ठ दान भी दिया है।

आश्रम परिवार परमपिता परमात्मा से दिवंगत आत्मा की सदगति एवं शांति के लिए प्रार्थना करता है। ईश्वर सभी परिवारजनों को इस वियोगजन्य दुख को सहन करने की शक्ति प्रदान करे।

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून।

पवमान पत्रिका के पाठकों द्वारा देय शुल्क

उत्तराखण्ड				
Customer No.	**Name**	**District.**	**Exp-Date**	**Outs. Amount**
UKY 24	श्री लक्ष्मण दास आर्य	देहरादून	Apr-20	200
UKY 35	श्री राजेश सैनी	देहरादून	Dec-19	400
UKY 37	श्री डी.के. गर्ग	देहरादून	Dec-19	400
UKY 38	श्री सत्यपाल खन्ना	देहरादून	Aug-19	400
UKY 47	श्री केदार सिंह रावत	देहरादून	Sep-20	200
UKY 54	श्री गणेश नारायण माथूर	देहरादून	Sep-18	600
UKY 69	विमला गुप्ता	हरिद्वार	Sep-20	200
UKY-122	श्री ज्ञानचन्द गुप्ता	देहरादून	Mar-19	400
UKY 72	जे0एस0 सामन्त	नैनीताल	May-20	200
UKY 81	जीवनचन्द जोशी	देहरादून	Aug-18	600
UKY 83	रतन सिंह आर्य	देहरादून	Dec-19	400
UKY-87	श्री मोहन सिंह चौहान	देहरादून	May-20	200
UKY 94	पं0 उम्मेद विशारद	देहरादून	Sep-20	200
UKY 106	रणजीत राय कपूर	देहरादून	Sep-20	200
UKY 111	उदय वीर सिंह	ऊधमसिंह नगर	Apr-19	400
UKY 114	मदन मोहन आर्य	देहरादून	Dec-19	400
UKY 120	श्री भगवान सिंह रावत	देहरादून	Nov-19	400
UKY 131	इन्द्रजीत मल्होत्रा	देहरादून	Feb-18	600
UkY-135	श्री बलराज आर्य	देहरादून	Jun-18	600
UKY 152	एस0पी सिह	देहरादून	Sep-19	400
UKY 171	श्रीमती संगीता चढ्ढा	देहरादून	Sep-19	400
UKY 173	श्री कैलाश चन्द्र गुप्ता	देहरादून	Jul-18	600
UKY 191	श्री मंजीत वालिया जी	हल्द्वानी	Sep-19	400
UKY 195	श्री दिनेश कुमार आर्य	हरिद्वार	Jun-19	400
UKY 200	कर्नल एस.एस रावत जी	देहरादून	Jun-20	200
UKY 213	श्री ओमपाल सिंह आर्य	हरिद्वार	Feb-18	600
UKY 215	श्री ऋषिपाल आर्य जी	हरिद्वार	May-18	600
UKY 216	श्री विवेक सिंघल जी	देहरादून	Dec-19	400
UKY-218	श्री सत्य प्रकाश बंसल	देहरादून	Nov-19	400
UKY-219	श्री रवीन्द्र पाहुजा जी	हरिद्वार	May-19	400
UKY-234	श्री राजकुमार भण्डारी	देहरादून	Jan-19	400

UKY 235	श्री वीरेन्द्र कुमार गोयल	हरिद्वार	Aug-20	200
UKY 247	श्री हुकम सिंह बिष्ट	देहरादून	Mar-19	400
UKY 252	श्रीमती आशा शर्मा जी	देहरादून	Feb-19	400
UKY 253	श्रीमती सरिता रावत जी	देहरादून	Mar-19	400
UKY 254	श्री अरूणा मेहरा जी	देहरादून	Sep-20	200
UKY 274	श्री रामानन्द शर्मा जी	देहरादून	Apr-20	200
UKY 279	श्री नानक चन्द लोहिया जी	हल्द्वानी	Jan-18	600
UKY 291	श्री राजीव आर्य	देहरादून	Aug-20	200
UKY 293	श्री जितेन्द्र सिंह तोमर जी	देहरादून	Sep-20	200
UKY 315	श्रीमती पद्मा मेहरा जी	देहरादून	Aug-20	200
UKY 317	चौधरी ओंकार सिंह जी	देहरादून	Jun-19	400
UKY 320	श्री पवन कुमार पाल जी	देहरादून	Mar-18	600
UKY 329	श्रीमती अनिता नेगी पुत्र श्री कमल सिंह नेगी	देहरादून	Jul-19	400
UKY 322	वेद मुनि जी एवं प्रभा आर्या	हरिद्वार	Jun-19	400
UKY 333	श्रीमती निर्मला देवी	उत्तराखण्ड	Jun-19	400
UKY 334	डा0 श्री मुनि/नि0 भारद्वाज (वरिष्ठ चि0 अफिस से.नि0)	उत्तराखण्ड	Jul-18	600
UKY 335	डा0 आनन्द प्रकाश त्यागी	देहरादून	Jul-18	600
UKY 336	श्री पी0डी0 गुप्ता	देहरादून	Jul-19	400
UKY 338	कै0 गोपाल सिंह राणा	देहरादून	Jul-20	200
UKY 342	श्री गोविन्द सिंह	उत्तराखण्ड	Aug-18	600
UKY 343	श्री देवी प्रसाद उनियाल जी	देहरादून	Sep-18	600
UKY 345	श्री ओमराज विश्नोई जी	देहरादून	Oct-19	400
UKY 346	डा0 श्याम मुनि जी	हरिद्वार	Oct-18	600
UKY 347	श्री एस.पी गोयल जी	देहरादून	Oct-20	200
UKY 348	कर्नल राम कुमार आर्य	देहरादून	Oct-18	600
UKY 349	श्री सतार सिंह आर्य जी	पौढी गढवाल	Oct-18	600
UKY 351	श्री पंडित वेद वसु आर्य	उत्तराखण्ड	Nov-19	400
UKY 353	श्री सुरेन्द्र सिंह तरार जी	देहरादून	Sep-20	200
UKY 354	आर्य समाज	ऋषिकेश	Nov-17	800
UKY 355	श्रीमती स्नेहलता गोगिया जी	देहरादून	Sep-20	200
UKY 356	श्री जय प्रकाश जी	देहरादून	Oct-19	400
UKY 357	श्रीमती संन्तोष आनन्द जी	देहरादून	Sep-20	200
UKY 358	श्री डी.के चौधरी ऐडवोकेट	देहरादून	Jan-18	600
UKY 359	श्री वी.पी. शर्मा जी	देहरादून	Feb-18	600

UKY 360	श्री आर.पी शर्मा जी	देहरादून	Feb-19	400
UKY 361	श्री एन.पी देसवाल जी	देहरादून	Feb-18	600
UKY 362	श्री सुनील जैन	देहरादून	Feb-18	600
UKY 364	डा0 आनन्द सुमन सिंह (सारस्वतम्)	देहरादून	Feb-18	600
UKY 365	श्री नरेन्द्र सिंह पुडीर जी	देहरादून	Nov-20	200
UKY 366	डा0 नवनीत परमार जी	हरिद्वार	Mar-18	600
UKY 367	श्री हरपाल सिह सैनी	रूड़की	Mar-18	600
UKY 368	श्री विरेन्द्र सिंह जी	देहरादून	Mar-18	600
UKY 369	श्री विंजय पाल जी	हरिद्वार	Mar-18	600
UKY 370	श्री सरेन्द्र पाल शास्त्री जी	ऊधमसिंह नगर	Mar-18	600
UKY 371	प्रबन्धक दयानन्द इंटर कालेज	पिथौरागढ़	Mar-18	600
UKY 372	श्री चीनू आर्य जी	हरिद्वार	Mar-18	600
UKY 373	श्री विनय कुमार नेगी जी	देहरादून	Mar-18	600
UKY 374	श्री दुर्गा प्रसाद अग्रवाल जी	हरिद्वार	Mar-18	600
UKY 375	श्री ओम प्रकाश गुलाटी जी	देहरादून	Apr-18	600
UKY 376	श्री प्रदीप कुमार मिश्र जी	देहरादून	Apr-20	200
UKY 377	श्रीमती राजेश्वरी पत्नी श्री राजेन्द्र सिंह	पौड़ी गढ़वाल	Apr-18	600
UKY 378	श्री राकेश शर्मा	देहरादून	Jul-20	200
UKY 379	श्री गजेन्द्रसिंह	देहरादून	May-18	600
UKY 380	श्रीमती सुनीता गुरूवारा	देहरादून	Jun-20	200
UKY 381	श्री अशोक कुमार तलवार	देहरादून	Apr-20	200
UKY 382	श्री अशोक शर्मा	देहरादून	May-18	600
UKY-385	आचार्य सुकामा आर्य कामिनीपुरी	हरिद्वार	Jun-18	600
UKY-383	सुखदेव कुमार	हरिद्वार	May-19	400
UKY-386	श्रीमती पुष्पा गुंसाई	देहरादून	Jun-18	600
UKY-387	श्री अजय उनियाल	देहरादून	Jun-18	600
UKY-388	श्री वाई के गोयल	हरिद्वार	Jun-18	600
UKY-389	श्री राम प्रकाश गुप्ता	हरिद्वार	Jun-18	600
UKY-390	श्री सम्पत सिंह रावत	देहरादून	Jun-18	600
UKY-391	श्री भगवत सिंह परिहार	बागेश्वर	May-20	200
UKY 392	श्री धीरज सिंह आर्य	पौढी गढ़वाल	May-20	200
UKY 393	श्री अजय शर्मा जी	देहरादून	Sep-19	400
UKY 394	श्री जे.पी अग्रवाल जी	उत्तराखण्ड	Sep-18	600
UKY 396	श्री राधे श्याम खत्री	देहरादून	Sep-18	600
UKY 397	श्री तेजस मुनि	हरिद्वार	Sep-18	600

UKY 399	विनोद कुमार गुज्जर	हरिद्वार	Oct-18	600
UKY-400	श्री ओम प्रकाश जी	देहरादून	Nov-18	600
UKY-401	श्री ओम प्रकाश जी	देहरादून	Nov-18	600
UKY-402	श्री राजकुमार चौधरी	उधम सिंह नगर	Nov-18	600
UKY-403	डा0 सीतल कन्नोजिया C/o श्री अमरनाथ	देहरादून	Jan-19	400
UKY-404	श्रीमती ऊषा कुमारी	देहरादून	Jan-19	400
UKU-405	श्री चन्दन लाल बेलवाल	देहरादून	Jan-19	400
UKY-406	श्री चन्द्र शेखर ममगांई	उत्तराखण्ड	Jan-19	400
UKY-407	श्री संजय सिंह कपकोटी	उत्तराखण्ड	Jan-19	400
UKY-408	श्री सतीश कुमार सलार	उत्तराखण्ड	Mar-19	400
UKY-409	साध्वी ओमयति वेदाचार्य	उत्तराखण्ड	Mar-19	400
UKY-410	श्री नरेश चन्द	उत्तराखण्ड	May-19	400
UKY-411	श्री बलवीर सिंह वाचस्पति	उत्तराखण्ड	Apr-19	400
UKY-412	श्री हिमांशु अरोरा	उत्तराखण्ड	May-19	400
UKY-413	सी पी कपूर	उत्तराखण्ड	May-19	400
UKY-414	डा0 ऋद्धि आर्य	उत्तराखण्ड	May-19	400
UKY-415	श्री राहुल कुमार c/o श्री पी के नौटियाल	उत्तराखण्ड	Jun-19	400
UKY-416	श्री मीना सैनीध्व श्री योगेश कुमार	उत्तराखण्ड	Feb-19	400
UKY 417	श्री नरेन्द्र सिंह डी एफ ओ	उत्तराखण्ड	Jul-19	400
UKY 418	श्री शिव बहादुर आले	उत्तराखण्ड	Jul-19	400
UKY 419	श्री पदम सिंह थापा	उत्तराखण्ड	Jul-19	400
UKY 420	श्री नरेश चन्द्र वर्मा	उत्तराखण्ड	Jul-19	400
UKY 421	श्री अर्जुन सिंह रावत	उत्तराखण्ड	Aug-18	600
UKY 422	श्री एस पी बंसल	देहरादून	Aug-19	400
UKY 423	श्री प्रेम प्रकाश खन्ना	देहरादून	Oct-19	400
UKY 424	श्री गौरव कुमार	देहरादून	Oct-19	400
UKY 426	रेनू बत्रा जी	देहरादून	Dec-19	400
UKY 427	श्री उर्वा दत्त द्विवेदी	देहरादून	Jan-20	200
UKY 428	स्वामी वेदानन्द सरस्वती जी	उत्तराखण्ड	Jan-20	200
UKY 429	श्री अजय कुमार गर्ग	देहरादून	Jan-20	200
UKY 430	श्री सुमन प्रकाश	देहरादून	Jan-20	200
UKY 431	श्री राजेन्द्र सिंह छाबड़ा	देहरादून	Jan-20	200
UKY 432	श्री योगेश कुमार जी	देहरादून	Jan-20	200
UKY 433	सुरेन्द्र नौटियाल जी	देहरादून	Feb-20	200

UKY 435	श्री विजय कुमार s/o श्री शेर सिंह	देहरादून	Feb-20	200
UKY 436	श्री प्रकाश चन्द्र आर्य	देहरादून	Apr-20	200
UKY 436	श्री धीरेन्द्र कुमार गांधी	देहरादून	Apr-20	200
UKY 436	श्री अरविंद कुमार गुप्ता	देहरादून	Apr-20	200
UKY 438	श्री ओ0पी0 महेन्दु	देहरादून	Jun-20	200
UKY 439	श्री राजेश बत्रा	देहरादून	Jun-20	200
UKY 440	श्री भगवान सिंह राठौर	देहरादून	Jul-20	200
UKY 441	श्री दीपक कुमार बोहरा	देहरादून	Jul-20	200
UKY 442	श्री कमल कुमार आर्य	उ0ख0	Sep-20	200
UKY 443	वाई0एम0 चौधरी	देहरादून	Sep-20	200
UKY 444	सुमित्रा तेवतिया जी	देहरादून	Sep-20	200
UKY 445	श्री केवल कृष्ण शैली	देहरादून	Sep-20	200
UKY 446	श्रीमती प्रेमलता जी	देहरादून	Sep-20	200
UKY 447	श्री अशोक कुमार शर्मा	देहरादून	Dec-20	200
UKY 448	श्री सतपाल आर्य	देहरादून	Dec-20	200
UKY 449	श्री भुवन भट्ट जी	उ0ख0	Jan-21	200
UKY 450	श्री दयाकृष्ण खोलिया जी	उ0ख0	Jan-21	200
UKY 451	श्री देव प्रकाश राणा	देहरादून	Jan-21	200
UKY 452	सुमेधा खुराना जी	देहरादून	Feb-20	200
		दिल्ली		
NDY 38	योगेश मल्होत्रा	नई दिल्ली	Aug-18	600
NDY 95	श्रीमती धर्म देवी जी	नई दिल्ली	Aug-20	200
NDY 113	श्री ओम प्रकाश हंस	दिल्ली	Oct-17	800
NDY 114	श्री राम अवतार शर्मा	दिल्ली	Oct-17	800
NDY 118	श्री नन्द किशोर अरोड़ा	नई दिल्ली	Aug-20	200
NDY 120	श्री जय प्रकाश भाटिया	नई दिल्ली	Jan-18	600
NDY 158	श्री एम.एल सरदाना जी	दिल्ली	Oct-19	400
NDY 163	श्रीमती कृष्णा ठाकुर जी	दिल्ली	Jul-18	600
NDY 164	श्री जगदीश मदान	नई दिल्ली	Aug-19	400
NDY 165	तिलक राज धनीजा,	नई दिल्ली	Aug-19	400
NDY 181	श्रीमती मंजुला वर्मा जी	नई दिल्ली	May-18	600
NDY 182	डा0 चिरन्जीव आर्य जी	नई दिल्ली	May-18	600
NDY 183	श्रीमती सुनन्दा जी	नई दिल्ली	May-18	600
NDY 199	श्री ज्ञानेन्द्र पाल जी	नई दिल्ली	Apr-20	200
NDY 200	श्री रवि कुमार सैनी जी	नई दिल्ली	Oct-18	600

NDY-206	श्रीमती नीना बख्शी	दिल्ली	Apr-18	600
NDY-208	श्री राजमलिक जी	नई दिल्ली	May-18	600
NDY-209	श्रीमती शांति आर्य	नई दिल्ली	May-18	600
NDY-210	श्रीमती एस0के0 कौशिक	नई दिल्ली	May-18	600
NDY-211	श्री ओमप्रकाश पाण्डे	नई दिल्ली	May-18	600
NDY-212	श्री सत्यवीर नागर	दिल्ली	May-20	200
NDY-214	श्री आर0एस0 गुप्ता	नई दिल्ली	May-18	600
NDY-215	श्री ओपी दहिया	नई दिल्ली	May-18	600
NDY-216	श्री प्रेम कुमार सचदेवा	नई दिल्ली	May-18	600
NDY-218	श्री त्रिलोकी नाथ मोंगिाया	नई दिल्ली	May-18	600
NDY-219	श्रीमती कांता दत्ता	नई दिल्ली	May-18	600
NDY-220	टमक अंतज – वजीमते	नई दिल्ली	May-18	600
NDY-221	श्री राजीव गुप्ता	नई दिल्ली	Jun-18	600
NDY-222	श्रीमती सुनन्दा बरारा	नई दिल्ली	Jun-18	600
NDY-223	श्री राकेश धनखड	नई दिल्ली	Jun-18	600
NDY-154	कु0 कंचन जी	नई दिल्ली	Dec-18	600
NDY-225	श्री ज्ञान भिक्षु वानप्रस्थी	नई दिल्ली	Dec-18	600
NDY-226	श्री आर्य रामपाल सैनी	नई दिल्ली	Dec-18	600
NDY-227	श्री संजय कुमार गुप्ता	नई दिल्ली	Apr-19	400
NDY-228	श्री यशपाल चावला	नई दिल्ली	May-19	400
NDY-229	श्री रामवीर सिंह	नई दिल्ली	May-19	400
NDY-230	ठाकुर लल्लु सिंह	नई दिल्ली	May-19	400
NDY-231	श्री प्रणव विरमानी	नई दिल्ली	May-19	400
NDY-233	श्री गौतम जी	नई दिल्ली	May-19	400
NDY-234	श्री वेद प्रकाश शर्मा	नई दिल्ली	Jul-19	400
NDY 235	श्री पंकज गोगिया जी	नई दिल्ली	Sep-19	400
NDY 236	श्री राजीव आहूजा	नई दिल्ली	Oct-19	400
NDY 237	अमर सिंह जी	नई दिल्ली	Oct-19	400
NDY 238	श्रीमती प्रीती पाहवा	नई दिल्ली	Feb-20	200
NDY 239	श्री एस0के0 ग्रोवर	नई दिल्ली	Jun-20	200
NDY 240	श्री दिवाकर बत्रा	नई दिल्ली	Jul-20	200
NDY 241	डा0 के0सी0 आर्य	नई दिल्ली	Sep-20	200

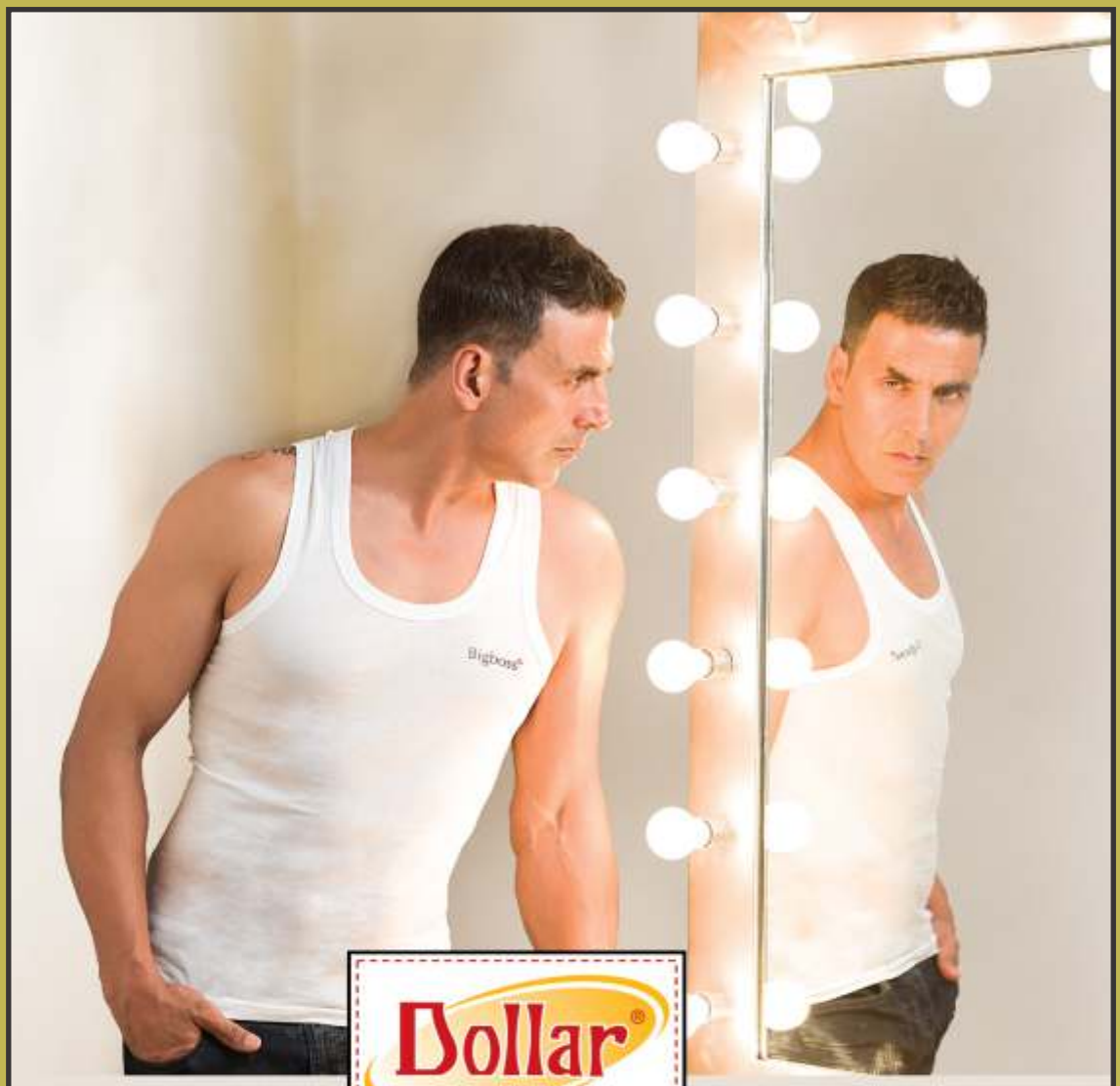

Dollar®

Bigboss

PREMIUM INNERWEAR

Fit Hai Boss

www.dollarglobal.in | Buy Online: www.dollarshoppe.in | Also available at all leading shopping portals

Dollar products are available in over 800 cities/towns and 100,000 MBOs across India | Govt. Certified STAR EXPORT HOUSE

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2018-2020 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

With Best Compliments From

MUNJAL SHOWA

हाई क्वालिटी शॉकर्स

TPM Certified
ISO / TS - 16949 - 2002 Certified
ISO - 14001 Certified
OHSAS - 18001 Certified

मुंजाल शोवा लिमिटेड भारत की प्रमुख शॉक एब्जॉर्बर्स बनाने वाली कंपनी है जिसकी रेंज फ्रन्ट फोर्कस, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कन्वेन्शनल) और गैस स्प्रिंगस की टू व्हीलर / फोर व्हीलर उद्योगों को उपलब्ध कराती है। कंपनी गुणवत्ता और सुरक्षा के उच्चतम मानकों के अनुरूप अपने सभी उत्पादों का निर्माण करती है। कंपनी के उत्पाद आरामदायक और सुरक्षित सवारी देते हैं और ये टिकाऊ और विश्वसनीय भी हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, QS 9000, TS–16949, ISO 14001, OHSAS 18001 और TPM प्रमाणित कंपनी है। मुंजाल शोवा के तीन मैन्युफैक्चरिंग प्लॉट हैं – गुड़गाँव, मानेसर (हरियाणा) और हरिद्वार (उत्तराखण्ड)। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

हमारे उत्पाद

- स्ट्रट्स / गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्कस
- गैस स्प्रिंगस / विन्डो बैलेन्सर्स

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

Hero HONDA HONDA MARUTI SUZUKI YAMAHA

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं. 9–11, मारुति इंडस्ट्रियल एरिया
गुड़गाँव–122015, हरियाणा
दूरभाष :
0124–2341001, 4783000, 4783100
ईमेल : msladmin@munjalshowa.net
वेबसाइट : www.munjalshowa.net

MUNJAL SHOWA

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित।
संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

सरस्वती प्रेस, देहरादून, ई-मेल : akhilg333@gmail.com